इकाई दो

पादप एवं प्राणियों में संरचनात्मक संगठन

अध्याय 5
पुष्पी पादपों की आकारिकी

अध्याय 6
पुष्पी पादपों का शारीर

अध्याय 7
प्राणियों में संरचनात्मक संगठन

पृथ्वी पर जीवन के विविध स्वरूपों का वर्णन केवल अवलोकन के आधार पर किया गया, जोकि पहले खुली आँखों से बिना किसी यांत्रिक मदद से था और बाद में आवर्धक लेंस और सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा किया गया। इस वर्णन में व्यापक तौर पर बाह्य एवं आंतरिक संरचनात्मक विशिष्टिता को ध्यान में रखा गया। इसके अतिरिक्त अवलोकनीय तथा इंद्रियगोचर (अववोधक) जीवन प्रतिभासों को भी वर्णन के एक भाग के रूप में आलेखित किया गया। प्रायोगिक जीव विज्ञान और अधिक स्पष्ट रूप में शरीर क्रिया विज्ञान या शरीर विज्ञान के पूर्णत: स्थापित होने से पहले प्रकृति विज्ञानियों ने केवल जीव विज्ञान के एक हिस्से का वर्णन किया था। यद्यपि, पर्याप्त समय तक जीव विज्ञान भी प्राकृतिक इतिहास के रूप में रहा। विस्तृत विवरण की दृष्टि से यह वर्णन आश्चर्यपूर्ण था। हालांकि यह एक छात्र की प्रारंभिक प्रतिक्रिया में निरस किस्म की हो सकती है, लेकिन यह ध्यान में रखने कि विस्तृत विवरण को बाद के दिनों में न्युनकारी जीव विज्ञान द्वारा प्रयुक्त किया गया योग्य है जो वैज्ञानिकों का ध्यान जीव प्रक्रमों पर जीवन के स्वरूप एवं संरचना से कहीं अधिक खींचा। अत: यह वर्णन शरीर विज्ञान या विकासीय जीव विज्ञान के शोधप्रश्नों के गठन में बहुत ही सार्थक एवं मददगार साबित हुए। इस इकाई के अनुगामी अध्यायों में पादपों एवं प्राणियों के संरचनात्मक संगठन के बारे में बताया जाएगा जिसमें शरीर क्रिया वैज्ञानिक एवं व्यवहारिक प्रत्याभासों का संरचनात्मक आधार भी शामिल होगा। सुविधा की दृष्टि से आकारिकी एवं शारीर विशिष्टताओं का वर्णन पादपों एवं प्राणियों के लिए अलग-अलग किया गया है।

कैथेराइन एसाव
(1898 - 1997)

कैथेराइन एसाव का जन्म 1898 में यूक्रेन में हुआ था। आपने रूस और जर्मनी में कृषि विज्ञान पर अध्ययन किया और संयुक्त राज्य अमेरिका से 1931 में डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की थी। आपने अपने प्रारंभिक प्रकाशनों में यह बताया था कि कर्ली टाप वाइरस पौधे में आहार-चालन या फलोएम ऊतक द्वारा फैलता है। डा॰ एसाव की 1954 में प्रकाशित *पादप शरीर (प्लांट एनोटोमी)* ने एक परिवर्तनात्मक एवं विकासात्मक उपागम को अपनाया जिससे पादप संरचना के बारे में समझ व्यापक हुई, तथा पूरे विश्वभर में अथाह प्रभाव छोड़ा। अर्थात् सीधे सीधे इस विशेष विज्ञान में पुनर्जागरण ला दिया।

सन् 1960 में, कैथेराइन एसाव की *एनाटॉमी ऑफ सीड प्लांटस* (बीज पादपों का शारीर) प्रकाशित हुई। इसे वेबेस्टर ऑफ प्लांट बॉयलोजी एवं इनसाइक्लोपीडिया (विश्व कोश) के रूप में संदर्भित किया गया था। सन् 1957 में, आपको नेशनल ऐकेडिमीक ऑफ साइंसेज के लिए चुना गया और आप इस सम्मान को पाने वाली 6वीं महिला बनीं। इस सम्मानीय पुरस्कार के अतिरिक्त आपने यू.एस.ए. के राष्ट्रपति जार्ज बुश से 1989 में नेशनल मेडल आफ साइंस भी प्राप्त किया।

जब 1997 मे केथेराइन एसाव मृत्यु की गोद में समा गए तब मिसूरी बॉटेनकल गार्डेन, एनाटॉमी एवं मार्फोलाजी के निदेशक पीटर रैवेन ने याद करते हुए कहा था, 'वह 99 वर्षों की आयु तक पादप जीवविज्ञान के क्षेत्र में' 'परिपूर्ण प्रभुत्व' युक्त बनी रहीं।

अध्याय 5

पुष्पी पादपों की आकारिकी

5.1 *मूल*

5.2 *तना (स्तंभ)*

5.3 *पत्ती*

5.4 *पुष्पक्रम*

5.5 *पुष्प*

5.6 *फल*

5.7 *बीज*

5.8 *कुछ प्ररूपी पुष्पी पादपों का अर्ध तकनीकी विवरण*

5.9 *कुछ महत्वपूर्ण फूलों का वर्णन*

यद्यपि एंजियोस्पर्म की **आकारिकी** अथवा बाह्य संरचना में बहुत विविधता पाई जाती है फिर भी इन उच्च पादपों का विशाल समूह हमें अपनी ओर आकर्षित करता है। इन उच्च पादपों में मूल, स्तंभ, पत्तियाँ, पुष्प तथा फलों की उपस्थिति इसका मुख्य अभिलक्षण है।

अध्याय 2 तथा 3 में हमने पौधों के वर्गीकरण के विषय में अध्ययन किया है जो आकारिकी तथा अन्य अभिलक्षणों पर आधारित थे। वर्गीकरण तथा उच्च पादपों को भली-भांति समझने के लिए (अथवा सभी जीवों के लिए) हमें संबंधित मानक वैज्ञानिक शब्दावली तथा मानक परिभाषाओं के ज्ञान की आवश्यकता होती है। हमें विभिन्न पादपों की विविधता, जो पौधों में पर्यावरण के अनुकूलन का परिणाम है जैसे विभिन्न आवासों के प्रति अनुकूलन, संरक्षण, चढ़ना तथा संचयन, आदि के विषय में भी ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता होती है।

यदि आप किसी खरपतवार को उखाड़ें तो आप देखेंगे कि उन सभी में मूल, तना तथा पत्तियाँ होती हैं। उनमें फूल तथा फल भी लगे हो सकते हैं। पुष्पी पादप का भूमिगत भाग मूल तंत्र जबकि ऊपरी भाग प्ररोह तंत्र होता है (चित्र 5.1)।

5.1 मूल

अधिकांश द्विबीजपत्री पादपों में मूलांकुर के लंबे होने से **प्राथमिक मूल** बनती है जो मिट्टी में उगती है। इसमें पार्श्वयी मूल होती हैं जिन्हें **द्वितीयक** तथा **तृतीयक मूल** कहते हैं। प्राथमिक मूल तथा इसकी शाखाएँ मिलकर **मूसला मूलतंत्र** बनाती हैं। इसका उदाहरण सरसों का पौधा है (चित्र 5.2 अ)। एकबीजपत्री पौधों में प्राथमिक मूल अल्पायु होती है और इसके स्थान पर अनेक मूल निकल जाती हैं। ये मूल तने के आधार से निकलती हैं। इन्हें **झकड़ा मूलतंत्र** कहते हैं। इसका उदाहरण गेहूँ का पौधा है (चित्र 5.2 ब)। कुछ

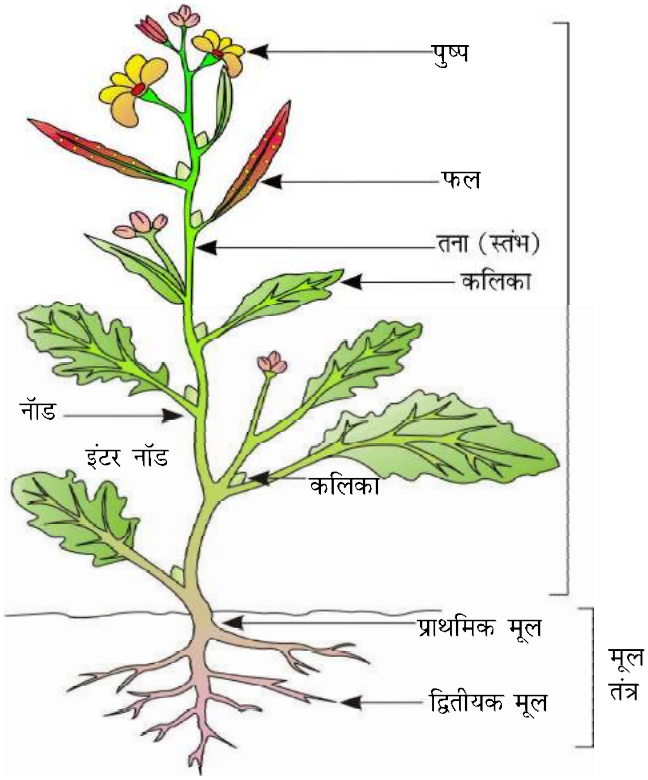

चित्र 5.1 पुष्पी पादप के भाग

पौधों जैसे घास तथा बरगद में मूल मूलांकुर की बजाय पौधे के अन्य भाग से निकलती हैं। इन्हें **अपस्थानिक मूल** कहते हैं (चित्र 5.2 स)। मूल तंत्र का प्रमुख कार्य मिट्टी से पानी तथा खनिज लवण का अवशोषण, पौधे को मिट्टी में जकड़ कर रखना, खाद्य पदार्थों का संचय करना तथा पादप नियमकों का संश्लेषण करना है।

5.1.1 मूल के क्षेत्र

मूल का शीर्ष अंगुलित्त जैसे **मूल गोप** से ढका रहता है (चित्र 5.3)। यह कोमल शीर्ष की तब रक्षा करता है जब मूल मिट्टी में अपना रास्ता बना रही होती है। मूल गोप से कुछ मिलीमीटर ऊपर **मेरिस्टेमी क्रियाओं का क्षेत्र** होता है। इस क्षेत्र की कोशिकाएँ बहुत छोटी, पतली भित्ति वाली होती हैं तथा उनमें सघन प्रोटोप्लाज्म होता है। उनमें बार-बार विभाजन होता है। इस क्षेत्र में समीपस्थ स्थित कोशिकाएं शीघ्रता से लंबाई में बढ़ती हैं और मूल को लंबाई में बढ़ाती हैं। इस क्षेत्र को **दीर्घीकरण क्षेत्र** कहते हैं। दीर्घीकरण क्षेत्र की कोशिकाओं में

(अ) (ब) (स)

चित्र 5.2 विभिन्न प्रकार की जड़ें (अ) मूसला मूल (ब) तंतुक मूल (स) अपस्थानिक मूल

विविधता तथा परिपक्वता आती है। इसलिए दीर्घीकरण के समीप स्थित क्षेत्र को **परिपक्व क्षेत्र** कहते हैं। इस क्षेत्र से बहुत पतली तथा कोमल धागे की तरह की संरचनाएँ निकलती हैं जिन्हें **मूलरोम** कहते हैं। ये मूल रोम मिट्टी से पानी तथा खनिज लवणों का अवशोषण करते हैं।

5.1.2 मूल के रूपांतरण

कुछ पादपों की मूल, पानी तथा खनिज लवण के अवशोषण तथा संवाहन के अतिरिक्त भी अन्य कार्यों को करने के लिए अपने आकार तथा संरचना में रूपांतरण कर लेती हैं। वे भोजन संचय करने के लिए, सहारे के लिए, श्वसन के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेती हैं (चित्र 5.4 तथा 5.5)। गाजर तथा शलजम की मूसला मूल तथा शकरकंद की अपस्थानिक मूल भोजन को संग्रहित करने के कारण फूल जाती हैं। क्या आप इसी प्रकार के कुछ अन्य उदाहरण दे सकते हैं? क्या आपको कभी देख कर यह आश्चर्य हुआ है कि बरगद से लटकती हुई संरचनाएँ क्या उसे सहारा देती हैं? इन्हें **प्रोप** रुट (सहारा देनी वाली मूल) कहते हैं। इसी प्रकार मक्का तथा गन्ने के तने में भी सहारा देने वाली मूल तने की निचली गाँठों से निकलती हैं। इन्हें **अवस्तभ मूल** कहते हैं। कुछ पौधों जैसे *राइजोफोरा*, जो अनूप क्षेत्रों में उगते हैं, में बहुत सी मूल भूमि से ऊपर वायु में निकलती हैं। ऐसी मूल को **श्वसन मूल** कहते हैं। ये श्वसन के लिए ऑक्सीजन प्राप्त करने में सहायक होती हैं।

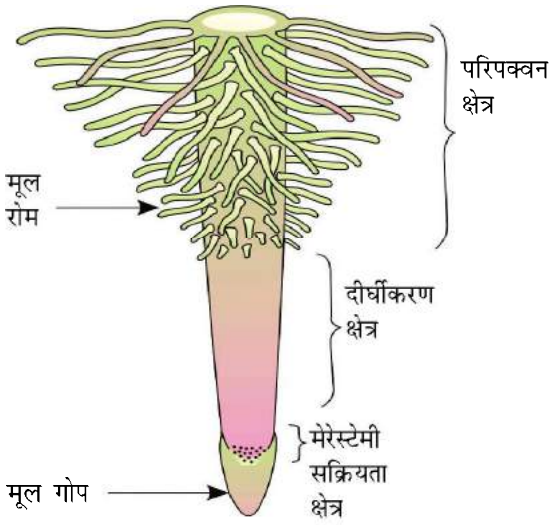

चित्र 5.3 मूल शीर्ष के क्षेत्र

5.2 तना

ऐसे कौन से अभिलक्षण हैं जो तने तथा मूल में विभेद स्थापित करते हैं? तना अक्ष का ऊपरी भाग है जिस पर शाखाएँ, पत्तियाँ, फूल तथा फल होते हैं। यह अंकुरित बीज के भ्रूण के प्रांकुर से विकसित होता है। तने पर **गाँठ** तथा **पोरियाँ** होती हैं। तने के उस क्षेत्र को जहां पर पत्तियाँ निकलती है गांठ कहते हैं। ये गांठें अंतस्थ अथवा कक्षीय हो सकती हैं। जब तना शैशव अवस्था में होता है, तब वह प्राय: हरा होता है और बाद में वह काष्ठीय तथा गहरा भूरा हो जाता है।

चित्र 5.4 बरगद के वृक्ष को सहारे देने के लिए मूल में रूपांतरण

ऐसपेरेगस

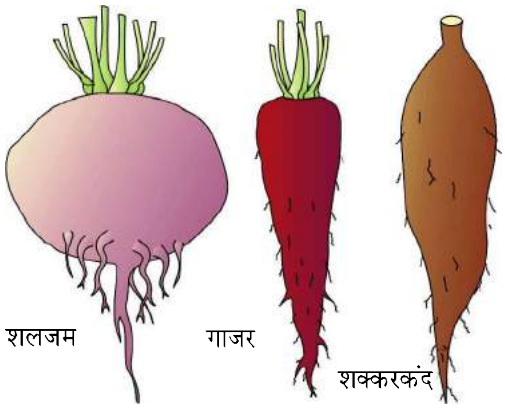

(अ)

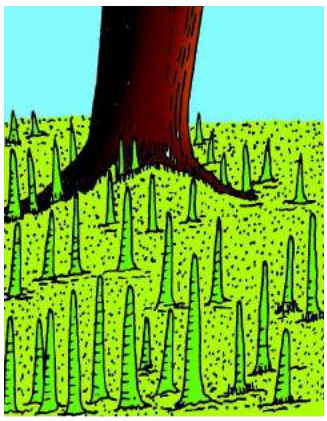

(ब)

चित्र 5.5 राइजोफोरा में (अ) संग्रहण (ब) श्वसन के लिए मूल का रूपांतरण

तने का प्रमुख कार्य शाखाओं को फैलाना, पत्ती, फूल तथा फल को संभाले रखना है। यह पानी, खनिज लवण तथा प्रकाश संश्लेषी पदार्थों का संवहन करता है। कुछ तने भोजन संग्रह करने, सहारा तथा सुरक्षा देने और कायिक प्रवर्धन करने के भी कार्य संपन्न करते हैं।

5.2.1 तने का रूपांतरण

तने सदैव आशा के अनुसार प्ररूपी नहीं होते। वे विभिन्न कार्यों को संपन्न करने के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेते हैं (चित्र 5.6)। आलू, अदरक, हल्दी, जमीकंद, अरबी के भूमिगत तने भोजन संचय के लिए रूपांतरित हो जाते हैं। वृद्धि के लिए प्रतिकूल परिस्थितियों के समय ये चिरकालिक अंग की तरह कार्य करते हैं।

तने के **प्रतान** जो कक्षीय कली से निकलते हैं, पतले तथा कुंडलित होते हैं और पौधे को ऊपर चढ़ने में सहायता करते हैं, जैसे कद्दुवर्गीय सब्जी (घीया, खीरा, तरबूज आदि) तथा अंगूर लता (वाइन) तने की कक्षीय कलियाँ काष्ठीय, सीधे तथा **नुकीले कांटों** में रूपांतरित हो सकती हैं। कांटे बहुत से पौधों में होते हैं जैसे *सिट्रस, बोगेनविलिया*। ये पशुओं से पौधों को बचाते हैं। शुष्क क्षेत्रों के पौधे **चपटे तने** (ओपंशिया, केक्ट्स) अथवा गूदेदार सिलिंडिराकार (यूफॉरबिया) रचनाओं में रूपांतरित हो जाते हैं इनके तनों में क्लोरोफिल होता है और प्रकाश-संश्लेषण करते हैं। कुछ पौधों को भूमिगत तने जैसे घास तथा स्ट्रॉबैरी, आदि नई कर्म स्थिति (निश) में फैल जाते हैं और जब पुराने पौधे मर जाते हैं तब नये पौधे बनते हैं। पोदीना तथा चमेली जैसे पौधों में प्रमुख अक्ष के आधार से एक पार्श्व शाखा निकलती है और कुछ समय तक वायवीय वृद्धि करने के बाद मुड़कर जमीन को छूते हैं। *पिस्टिया* तथा *आइकोरनिया* जैसे कलीय पादपों में एक पार्श्वीय शाखा निकलती है जिसकी पोरियां छोटी होती हैं और जिसके प्रत्येक गांठ पर पत्तियों का झुंड तथा फूल का गुच्छा तथा *क्राइसेंथिमम* (गुलदाउदी) में

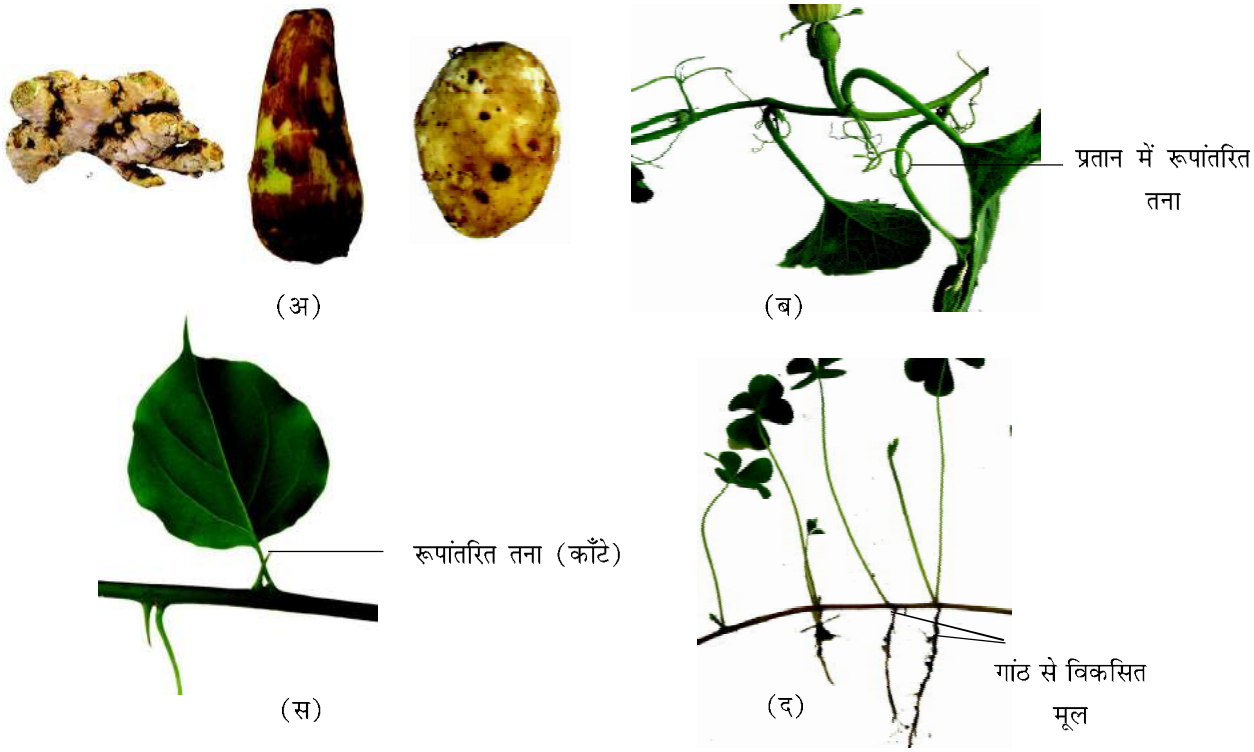

चित्र 5.6 (अ) संग्रहण (ब) सहारा (स) संरक्षण (द) कायिक प्रबर्धन तथा फैलने के लिए तने का रूपांतरण

पार्श्वीय शाखाएँ आधार तथा भूमिगत प्रमुख तने से निकलती हैं और मिट्टी के नीचे क्षैतिज रूप से वृद्धि करती हैं और उसके बाद बाहर निकल आती हैं और पत्तियों युक्त प्ररोह बनाती हैं।

5.3 पत्ती

पत्ती पार्श्वीय, चपटी संरचना होती है जो तने पर लगी रहती है। यह गाँठ पर होती है और इसके कक्ष में कली होती है। **कक्षीय कली** बाद में शाखा में विकसित हो जाती हैं। पत्तियाँ प्ररोह के शीर्षस्थ मेरिस्टेम से निकलती हैं। ये पत्तियाँ अग्राभिसारी रूप में लगी रहती हैं। ये पौधों के बहुत ही महत्त्वपूर्ण कायिक अंग हैं, क्योंकि ये भोजन का निर्माण करती हैं।

एक प्ररूपी पत्ती के तीन भाग होते हैं- पर्णाधार, पर्णवृंत तथा स्तरिका (चित्र 5.7 अ)। पत्ती **पर्णाधार** की सहायता से तने से जुड़ी रहती है और इसके आधार पर दो पार्श्व छोटी पत्तियाँ निकल सकती हैं जिन्हें अनुपर्ण कहते हैं। एकबीजपत्री में पर्णाधार चादर की तरह फैलकर तने को पूरा अथवा आंशिक रूप से ढक लेता है। कुछ लेग्यूमी तथा कुछ अन्य पौधों में पर्णाधार फूल जाता है। ऐसे पर्णाधार को **पर्णवृंततल्प** (पल्वाइनस) कहते हैं। **पर्णवृंत** पत्ती को इस तरह सजाता है जिससे कि इसे अधिकतम सूर्य का प्रकाश मिल

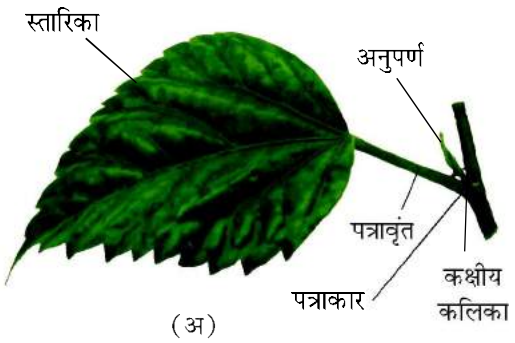

(अ)

(ब) (स)

चित्र 5.7 पत्ती की संरचना (अ) पत्ती के भाग (ब) जालिका शिराविन्यास (स) समानांतर शिराविन्यास

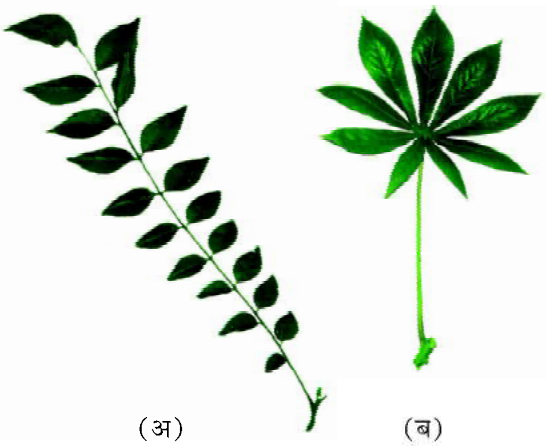

(अ) (ब)

चित्र 5.8 संयुक्त पत्तियां (अ) पिच्छाकारी संयुक्त पत्ती (ब) हस्ताकार संयुक्त पत्ती

सके। लंबा पतला, लचीला पर्णवृंत स्तरिका को हवा में हिलाता रहता है ताकि ताजी हवा पत्ती को मिलती रहे। **स्तरिका** पत्ती का हरा तथा फैला हुआ भाग है जिसमें शिराएं तथा शिरिकाएँ होती हैं। इसके बीच में एक सुस्पष्ट शिरा होती है जिसे **मध्यशिरा** कहते हैं। शिराएँ पत्ती को दृढ़ता प्रदान करती है और पानी, खनिज तथा भोजन के स्थानांतरण के लिए नलिकाओं की तरह कार्य करती हैं। विभिन्न पौधों में स्तरिका की आकृति उसके सिरे, चोटी, सतह तथा कटाव में विभिन्नता होती है।

5.3.1 शिराविन्यास

पत्ती पर शिरा तथा शिरिकाओं के विन्यास को **शिराविन्यास** कहते हैं। जब शिरिकाएँ स्तरिका पर एक जाल-सा बनाती हैं तब उसे **जालिका शिराविन्यास** कहते हैं (चित्र 5.7 ब)। यह प्रायः द्विबीजपत्री पौधों में मिलता है। जब शिरिकाएँ समानांतर होती हैं उसे **समानांतर शिराविन्यास** कहते हैं (चित्र 5.7 स)। यह प्रायः एक बीजपत्री पौधों में मिलता है।

5.3.2 पत्ती के प्रकार

जब पत्ती की स्तरिका अछिन्न होती है अथवा कटी हुई लेकिन कटाव मध्यशिरा तक नहीं पहुँच पाता, तब वह **सरल पत्ती** कहलाती है। जब स्तरिका का कटाव मध्य शिरा तक पहुँचे और बहुत पत्रकों में टूट जाए तो ऐसी पत्ती को **संयुक्त पत्ती** कहते हैं। सरल तथा संयुक्त पत्तियों, दोनों में पर्णवृत के कक्ष में कली होती है। लेकिन संयुक्त पत्ती के पत्रकों के कक्ष में कली नहीं होती।

संयुक्त पत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं। (चित्र 5.8) **पिच्छाकार संयुक्त पत्तियों** में बहुत से पत्रक एक ही **अक्ष** (एक्सिस) जो मध्यशिरा के रूप में होती है, पर स्थित होते हैं। इसका उदाहरण नीम है।

हस्ताकार संयुक्त पत्तियों में पत्रक एक ही बिंदु अर्थात् पर्णवृंत की चोटी से जुड़े रहते हैं। उदाहरणतः सिल्क कॉटन वृक्ष।

5.3.3 पर्णविन्यास

तने अथवा शाखा पर पत्तियों के विन्यस्त रहने के क्रम को पर्णविन्यास कहते हैं। यह प्रायः तीन प्रकार का होता है- एकांतर, सम्मुख तथा चक्करदार। (चित्र 5.9) **एकांतर** प्रकार के पर्णविन्यास में एक अकेली पत्ती प्रत्येक गांठ पर एकांतर रूप में लगी रहती

है। उदाहरणत: गुड़हल, सरसों, सूर्यमुखी। सम्मुख प्रकार के पर्णविन्यास में प्रत्येक गांठ पर एक जोड़ी पत्ती निकलती है और एक दूसरे के **सम्मुख** होती है। इसका उदाहरण है केलोट्रोपिस (आक), और अमरूद। यदि एक ही गांठ पर दो से अधिक पत्तियाँ निकलती हैं और वे उसके चारों ओर एक चक्कर सा बनाती हैं तो उसे **चक्करदार** पर्णविन्यास कहते हैं जैसे *एल्सटोनिआ* (डेविल ट्री)।

5.3.4 पत्ती के रूपांतरण

पत्ती को भोजन बनाने के अतिरिक्त अन्य कार्यों के लिए रूपांतरित होना पड़ता है। वे ऊपर चढ़ने के लिए **प्रतान** में जैसे मटर और रक्षा के लिए **शूल** (कांटों) में जैसे केक्ट्स में परिवर्तित हो जाते हैं (चित्र 5.10 अ, ब)। प्याज तथा लहसुन की गूदेदार पत्तियों में भोजन संचयित रहता है (चित्र 5.10 स)। कुछ पौधों जैसे आस्ट्रेलियन अकेसिया में पत्तियाँ छोटी तथा अल्पायु होती हैं। इन पौधों में पर्णवृंत फैलकर हरा हो जाता है और भोजन बनाने का कार्य करता है। कुछ कीटाहारी पादपों में पत्ती घड़े के आकार में रूपांतरित होती हैं। उदाहरणत: घटपर्णी, वीनस फ्लाई ट्रेप हैं।

5.4 पुष्पक्रम

फूल एक रुपांतरित प्ररोह है जहां पर प्ररोह का शीर्ष मेरिस्टेम पुष्पी मेरिस्टेम में परिवर्तित हो जाता है। पोरियाँ लंबाई में नहीं बढ़ती और अक्ष दबकर रह जाती है। गांठों पर क्रमानुसार पत्तियों की बजाय पुष्पी उपांग निकलते हैं। जब प्ररोह शीर्ष फूल में परिवर्तित होता है, तब वह सदैव अकेला होता है। पुष्पी अक्ष पर फूलों के लगने के क्रम को **पुष्पक्रम** कहते हैं। शीर्ष का फूल में परिवर्तित होना है अथवा सतत रूप से वृद्धि करने के आधार पर पुष्पक्रम को दो प्रकार असीमाक्षी तथा ससीमाक्षी में बांटा गया है। **असीमाक्षी** प्रकार के पुष्पक्रम के प्रमुख अक्ष में सतह वृद्धि होती रहती है और फूल पार्श्व में अग्राभिसारी क्रम में लगे रहते हैं (चित्र 5.11)।

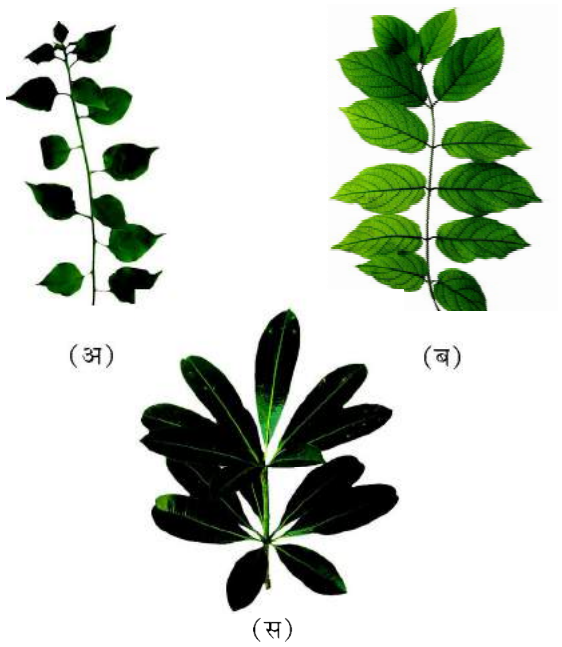

चित्र 5.9: विभिन्न प्रकार का शिराविन्यास (अ) एकांतरण (ब) सम्मुख (स) चक्करदार

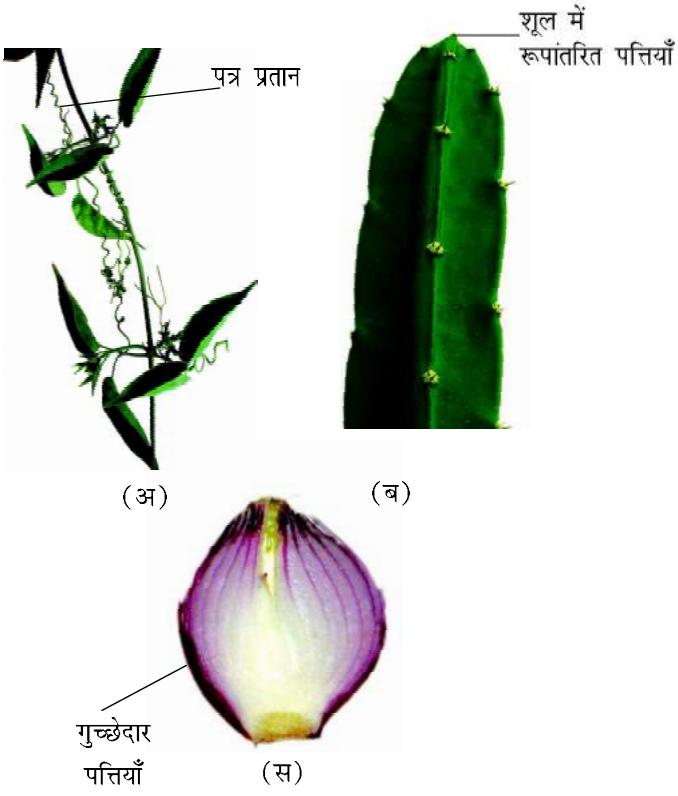

चित्र 5.10 पत्ती का रूपांतरण (अ) सहारे के लिए प्रतान (ब) रक्षा के लिए: शूल (स) संचयन के लिए: गूदेदार पत्तियां

चित्र 5.11 असीमाक्षी पुष्पक्रम

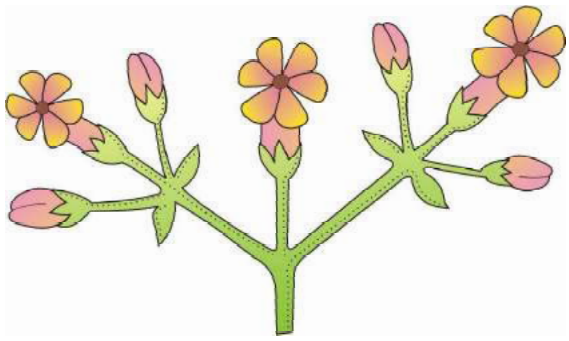

चित्र 5.12 ससीमाक्षी पुष्पक्रम

ससीमाक्षी पुष्पक्रम में प्रमुख अक्ष के शीर्ष पर फूल लगता है, इसलिए इसमें सीमित वृद्धि होती है। फूल तलाभिसारी क्रम में लगे रहते हैं जैसा कि चित्र 5.12 में दिखाया गया है।

5.5 पुष्प

एंजियोस्पर्म में पुष्प (फूल) एक बहुत महत्वपूर्ण ध्यानकर्षी रचना है। यह एक रूपांतरित प्ररोह है जो लैंगिक जनन के लिए होता है। एक प्ररूपी फूल में विभिन्न प्रकार के विन्यास होते हैं जो क्रमानुसार फूले हुए पुष्पावृंत जिसे **पुष्पासन** कहते हैं, पर लगे रहते हैं। ये हैं-केलिक्स, कोरोला, पुमंग तथा जायांग।

केलिक्स तथा कोरोला सहायक अंग है जबकि पुमंग तथा जायांग लैंगिक अंग हैं। कुछ फूलों जैसे प्याज में केल्किस तथा कोरोला में कोई अंतर नहीं होता। इन्हें परिदलपुंज (पेरिऐंथ) कहते हैं। जब फूल में पुंकेसर तथा पुमंग दोनों ही होते हैं तब उसे द्विलिंगी अथवा **उभयलिंगी** कहते हैं। यदि किसी फूल में केवल एक पुंकेसर अथवा अंडप हो तो उसे **एकलिंगी** कहते हैं।

सममिति में फूल **त्रिज्यसममिति** (नियमित) अथवा **एकव्याससममित** (द्विपार्श्विक) हो सकते हैं। जब किसी फूल को दो बराबर भागों में विभक्त किया जा सके तब उसे **त्रिज्यसममिति** कहते हैं। इसके उदाहरण हैं सरसों, **धतूरा**, मिर्च। लेकिन जब फूल को केवल एक विशेष ऊर्ध्वाधर समतल से दो समान भागों में विभक्त किया जाए तो उसे **एकव्याससममित** कहते हैं। इसके उदाहरण हैं- मटर, गुलमोहर, सेम, *केसिया* आदि। जब कोई फूल बीच से किसी भी ऊर्ध्वाधर समतल से दो समान भागों में विभक्त न हो सके तो उसे **असममिति** अथवा **अनियमित** कहते हैं। जैसे कि *केना* ।

एक पुष्प **त्रितयी, चतुष्टयी, पंचतयी** हो सकता है यदि उसमें उनके उपांगों की संख्या 3,4 अथवा 5 के गुणक में हो सकती है। जिस पुष्प में सहपत्र होते हैं (पुष्पवृंत के आधार पर छोटी-छोटी पत्तियाँ होती हैं) उन्हें **सहपत्री** कहते हैं और जिसमें सहपत्र नहीं होते, उन्हें **सहपत्रहीन** कहते हैं।

पुष्पवृंत पर केल्किस, केरोला, पुमंग तथा अंडाशय की सापेक्ष स्थिति के आधार पर पुष्प को अधोजायांगता (हाइपोगाइनस), परिजायांगता (पेरीगाइनस), तथा अधिजायांता

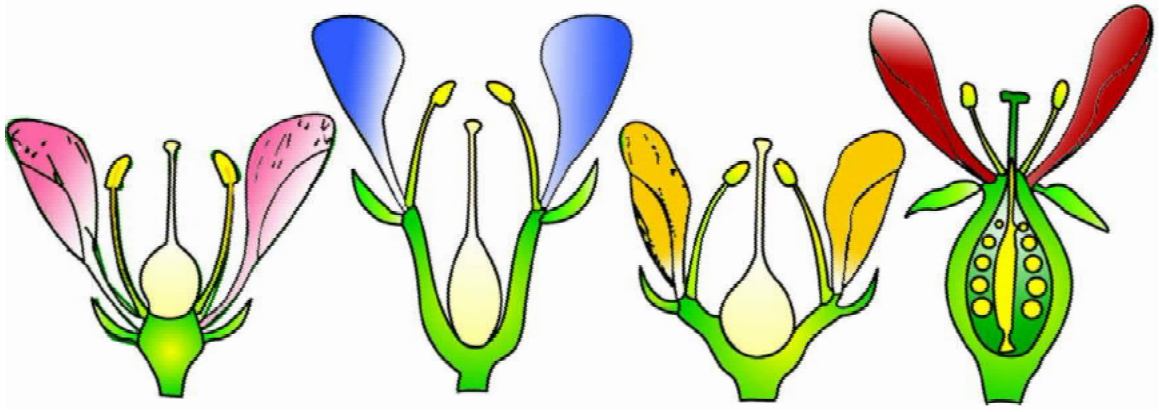

(अ) (ब) (स) (द)

चित्र 5.13 पुष्पासन पर पुष्पीय भागों की स्थिति (अ) अधोजायांगता (ब तथा स) परिजायंगता (द) अधिजायंगता

(ऐपीगाइनस) (चित्र 5.13)। **अधोजायांगता** में जायांग सर्वोच्च स्थान पर स्थित होता है और अन्य अंग नीचे होते हैं। ऐसे फूलों में अंडाशय **ऊर्ध्ववर्ती** होते हैं। इसके सामान्य उदाहरण सरसों, गुड़हल तथा बैंगन हैं। **परिजायांगता** में अंडाशय मध्य में होता है और अन्य भाग पुष्पासन के किनारे पर स्थित होते हैं तथा ये लगभग समान ऊँचाई तक होते हैं। इसमें अंडाशय **आधा अधोवर्ती** होता है। इसके सामान्य उदाहरण हैं- पल्म, गुलाब, आड़ू हैं। **अधिजायांगता** में पुष्पासन के किनारे ऊपर की ओर वृद्धि करते हैं तथा वे अंडाशय को पूरी तरह घेर लेते हैं और इससे संलग्न हो जाते हैं। फूल के अन्य भाग अंडाशय के ऊपर उगते हैं। इसलिए अंडाशय **अधोवर्ती** होता है। इसके उदाहरण हैं सूरजमुखी के अरपुष्पक, अमरूद तथा घीया।

5.5.1 पुष्प के भाग

प्रत्येक पुष्प में चार चक्र होते हैं जैसे केल्किस, कोरोला, पुमंग तथा जायांग (चित्र 5.14)।

5.5.1.1 केल्किस

केल्किस पुष्प का सबसे बाहरी चक्र है और इसकी इकाई को बाह्य दल कहते हैं। प्रायः बाह्य दल हरी पत्तियों की तरह होते हैं और कली की अवस्था में फूल की रक्षा करते हैं। **केल्किस संयुक्त बाह्य दली** (जुड़े हुए बाह्य दल) अथवा **पृथक बाह्य दली** (मुक्त बाह्य दल) होते हैं।

5.5.1.2 कोरोला

कोरोला, दल (पंखुड़ी) का बना होता है। दल प्रायः चमकीले रंगदार होते हैं। ये परागण के लिए कीटों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। केल्किस की तरह कोरोला भी **संयुक्त दली** अथवा **पृथक्दलीय** हो सकता है। पौधों में कोरोला की आकृति तथा रंग

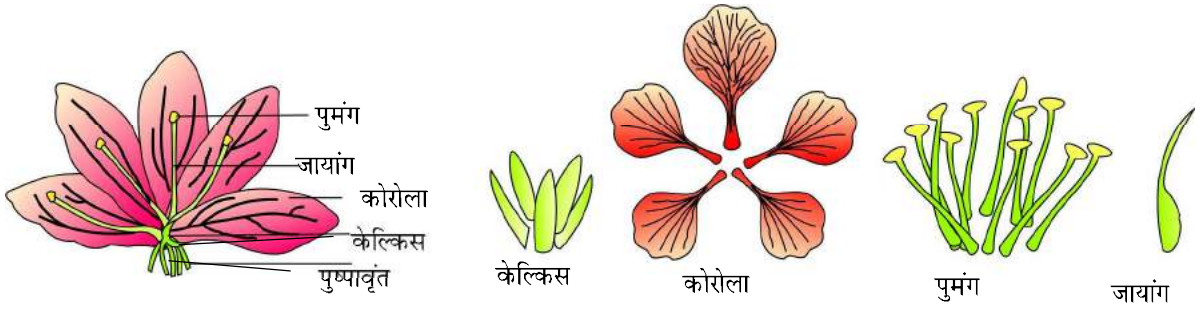

चित्र 5.14 पुष्प के भाग

भिन्न-भिन्न होता हैं। जहाँ तक आकृति का संबंध है, वह नलिकाकार, घंटाकार, कीप के आकार का तथा चक्राकार हो सकती है।

पुष्पदल विन्यास पुष्पकली में उसी चक्र की अन्य इकाइयों के सापेक्ष बाह्य दल अथवा दल के लगे रहने के क्रम को पुष्प दल विन्यास कहते हैं। पुष्प दल विन्यास के प्रमुख प्रकार कोर स्पर्शी, व्यावर्तित, कोरछादी, वैकजीलेरी होते हैं (चित्र 5.15)। जब चक्र के बाह्यदल अथवा दल एक दूसरे के किनारों को केवल स्पर्श करते हों उसे **कोरस्पर्शी** कहते हैं; जैसे *केलोट्रॉपिस* । यदि किसी दल अथवा बाह्य दल का किनारा अगले दल पर तथा दूसरे तीसरे आदि पर अतिव्याप्त हो तो उसे **व्यावर्तित** कहते हैं। इसके उदाहरण: गुडहल, भिंडी तथा कपास हैं। यदि बाह्य दल अथवा दल दूसरे पर अतिव्याप्त हो तो उसकी कोई विशेष दिशा नहीं होती। इस प्रकार की स्थिति को **कोरछादी** कहते हैं। इसके उदाहरण - *केसिया*, गुलमोहर हैं। मटर, सेम में पाँच दल होते हैं। इनमें से सबसे बड़ा (मानक) दो पार्श्वी को (पंख) और ये दो सबसे छोटे अग्र दलों (कूटक) को अतिव्यापित करते हैं। इस प्रकार के पुष्पदल विन्यास को **वैक्जीलरी** अथवा पैपिलिओनेसियस कहते हैं।

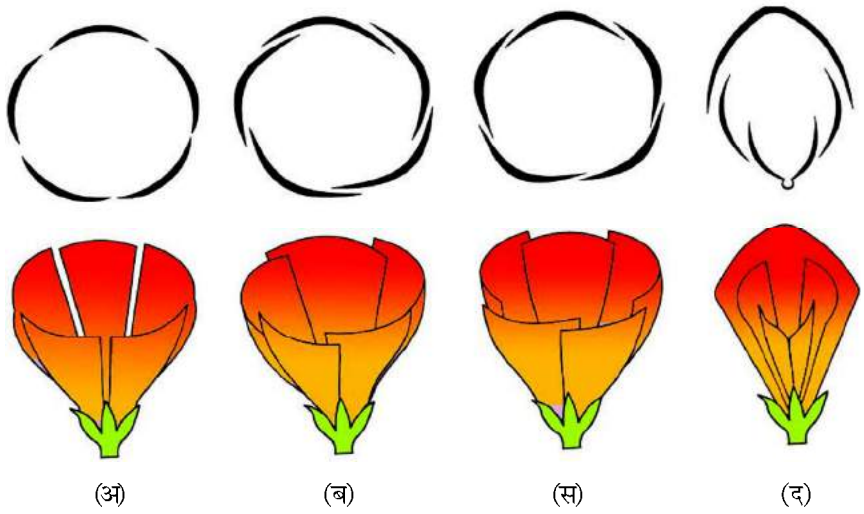

चित्र 5.15 पुष्पदल विन्यास के विभिन्न प्रकार (अ) कोरस्पर्शी (ब) व्यावर्तित (स) कोरछादी (द) वैक्जीलेरी

5.5.1.3 पुमंग

पुमंग पुंकेसरों से मिलकर बनता है। प्रत्येक पुंकेसर जो फूल के नर जनन अंग हैं, में एक तंतु तथा एक परागकोश होता है। प्रत्येक परागकोश प्राय: द्विपालक होता है और प्रत्येक पालि में दो कोष्ठक, परागकोष होते हैं। पराग कोष में परागकण होते हैं। बंध्य पुंकेसर जनन करने में असमर्थ होते हैं और वह **स्टेमिनाएड** कहलाते हैं।

पुंकेसर फूल के अन्य भागों जैसे दल अथवा आपस में ही जुड़े हो सकते हैं। जब पुंकेसर दल से जुड़े होते हैं, तो उसे **दललग्न (ऐपीपेटलस)** कहते हैं जैसे बैंगन में। यदि ये परिदल पुंज से जुड़े हों तो उसे **परिदल लग्न (ऐपीफिलस)** कहते हैं जैसे लिली में। फूल में पुंकेसर मुक्त (बहु पुंकेसरी) अथवा जुड़े हो सकते हैं। पुंकेसर एक गुच्छे अथवा बंडल **(एकसंघी)** जैसे गुड़हल में है; अथवा दो बंडल **(द्विसंघी)** जैसे मटर में अथवा दो से अधिक बंडल **(बहुसंघी)** जैसे सिट्रस में हो सकते हैं। उसी फूल के तंतु की लंबाई में भिन्नता हो सकती है जैसे सेल्विया तथा सरसों में।

5.5.1.4 जायांग

जायांग फूल के मादा जनन अंग होते हैं। ये एक अथवा अधिक अंडप से मिलकर बनते हैं। अंडप के तीन भाग होते हैं- वर्त्तिका, वर्तिकाग्र तथा अंडाशय। **अंडाशय** का आधारी भाग फूला हुआ होता है जिस पर एक लम्बी नली होती है जिसे वर्तिका कहते हैं। वर्त्तिका अंडाशय को वर्त्तिकाग्र से जोड़ती है। **वर्त्तिकाग्र** प्राय: **वर्त्तिका** की **चोटी** पर होती है और परागकण को ग्रहण करती है। प्रत्येक अंडाशय में एक अथवा अधिक बीजांड होते हैं जो चपटे, गद्देदार **बीजांडासन** से जुड़े रहते हैं। जब एक से अधिक अंडप होते हैं तब वे पृथक (मुक्त) हो सकते हैं, (जैसे कि गुलाब और कमल में) इन्हें **वियुक्तांडपी** (एपोकार्पस) कहते हैं। जब अंडप जुड़े होते हैं, जैसे मटर तथा टमाटर, तब उन्हें **युक्तांडपी** (सिनकार्पस) कहते हैं। निषेचन के बाद बीजांड से बीज तथा अंडाशय से फल बन जाते हैं।

बीजांडन्यास : अंडाशय में बीजांड के लगे रहने का क्रम को बीजांडन्यास (प्लैसेनटेशन) कहते हैं। बीजांडन्यास सीमांत, स्तंभीय, भित्तीय, आधारी, केंद्रीय तथा मुक्त स्तंभीय प्रकार का होता है (चित्र 5.16)। **सीमांत** में बीजांडासन अंडाशय के अधर सीवन के साथ-साथ कटक बनाता है और बीजांड कटक पर स्थित रहते हैं जो दो कतारें बनाती हैं जैसे कि मटर में। जब बीजांडासन अक्षीय होता है और बीजांड बहुकोष्ठकी अंडाशय पर लगे होते हैं तब ऐसे बीजांडन्यास को **स्तंभीय** कहते हैं। इसका उदाहरण हैं गुड़हल, टमाटर तथा नींबू। **भित्तीय** बीजांडन्यास में बीजांड अंडाशय की भीतरी भित्ति पर अथवा परिधीय भाग में लगे रहते हैं। अंडाशय एक कोष्ठक होता है लेकिन आभासी पट बनने के कारण दो कोष्ठक में विभक्त हो जाता है। इसके उदाहरण हैं क्रुसीफर (सरसों) तथा *आर्जेमोन* हैं। जब बीजांड केंद्रीय कक्ष में होते हैं और यह पुटीय नहीं होते जैसे

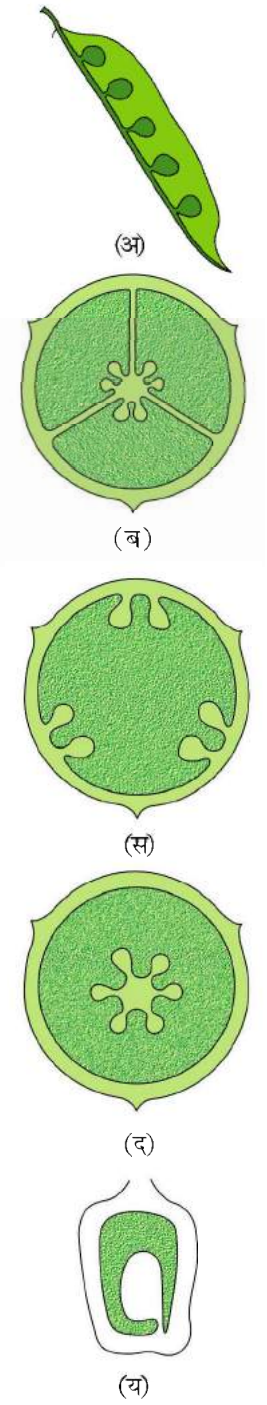

चित्र 5.16 बीजांडन्यास के प्रकार
(अ) सीमांत
(ब) स्तंभीय (स) भित्तीय
(द) मुक्तस्तंभीय
(य) आधारी

कि *डायऐंथस* तथा *प्रिमरोज*, तब इस प्रकार के बीजांडन्यास को **मुक्तस्तंभीय** कहते हैं। **आधारी** बीजांडन्यास में बीजांडासन अंडाशय के आधार पर होता है और इसमें केवल एक बीजांड होता है। इसके उदाहरण सूरजमुखी, गेंदा है।

5.6 फल

फल पुष्पी पादपों का एक प्रमुख अभिलक्षण है। यह एक परिपक्व अंडाशय होता है जो निषेचन के बाद विकसित होता है। यदि फल बिना निषेचन के विकसित हो तो उसे **अनिषेकी (पार्थेनोकर्णिक)** फल कहते हैं।

प्राय: फल में एक भित्ति अथवा फल भित्ति तथा बीज होते हैं। फल भित्ति शुष्क अथवा गूदेदार हो सकती है। जब फल भित्ति मोटी तथा गूदेदार होती है तब उसमें एक बाहरी भित्ति होती जिसे **बाह्यफल** भित्ति कहते हैं। इसके मध्य में **मध्यफल** भित्ति तथा भीतरी ओर **अंत:फल** भित्ति होती है।

आम तथा नारियल में फल के प्रकार को अष्ठिल (ड्रूप) कहते हैं (चित्र 5.17)। ये फल एकांडपी ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय से विकसित होते हैं और इनमें एक बीज होता है। आम में फल भित्ति बाह्यफल भित्ति, गूदेदार एवं खाने योग्य मध्यफल भित्ति तथा भीतरी कठोर पथरीली अंत:फल भित्ति के सुस्पष्ट रूप से विभेदित होती है। नारियल में मध्यफल भित्ति तंतुमयी होती है।

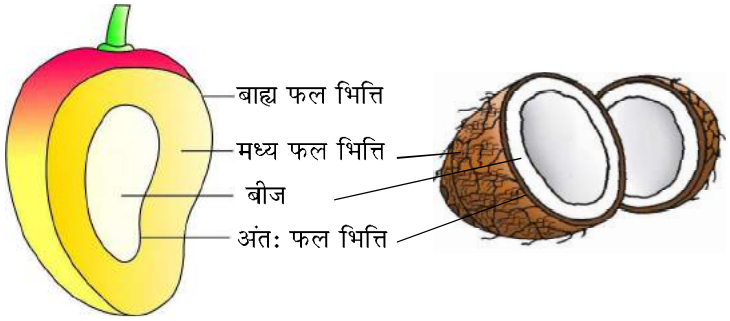

चित्र 5.17 फल के भाग (अ) आम (ब) नारियल

5.7 बीज

निषेचन के बाद बीजांड से बीज बन जाते हैं। बीज में प्राय: एक बीजावरण तथा भ्रूण होता है। भ्रूण में एक मूलांकुर, एक भ्रूणीय अक्ष तथा एक (गेहूं, मक्का) अथवा दो (चना, मटर) बीजपत्र होते हैं।

5.7.1 द्विबीजपत्री बीज की संरचना

बीज की बाहरी परत को **बीजावरण** कहते हैं। बीजावरण की दो सतहें होती हैं- बाहरी को **बीजचोल** और भीतरी स्तह को **टेगमेन** कहते हैं। बीज पर एक क्षत चिह्न की तरह

का ऊर्ध्व होता है जिसके द्वारा बीज फल से जुड़ा रहता है। इसे नाभिका कहते हैं। प्रत्येक बीज में नाभिका के ऊपर छिद्र होता है जिसे **बीजांडद्वार** कहते हैं। बीजावरण हटाने के बाद आप बीज पत्रों के बीच भ्रूण को देख सकते हैं। भ्रूण में एक भ्रूणीय अक्ष और दो गूदेदार बीज पत्र होते हैं। बीज पत्रों में भोज्य पदार्थ संचित रहता है। अक्ष के निचले नुकीले भाग को मूलांकुर तथा ऊपरी पत्तीदार भाग को प्रांकुर कहते है (चित्र 5.18)। **भ्रूणपोष** भोजन संग्रह करने वाला ऊतक है जो द्विनिषेचन के परिणामस्वरूप बनते हैं। चना, सेम तथा मटर में भ्रूणपोष पतला होता है। इसलिए ये अभ्रूणपोषी हैं जबकि अरंड में यह गूदेदार होता है (भ्रूण पोषी है)।

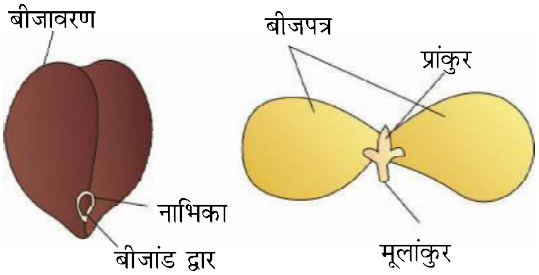

चित्र 5.18 द्विबीजपत्री बीज की संरचना

5.7.2 एकबीजपत्री बीज की संरचना

प्राय: एकबीजपत्री बीज भ्रूणपोषी होते हैं लेकिन उनमें से कुछ अभ्रूणपोषी होते हैं। उदाहरणत: आर्किड। अनाज के बीजों जैसे मक्का में बीजावरण झिल्लीदार, तथा फल भित्ति से संग्लित होता है। भ्रूणपोष स्थूलीय होता है और भोजन का संग्रहण करता है। भ्रूणपोष की बाहरी भित्ति भ्रूण से एक प्रोटीनी सतह द्वारा अलग होती है जिसे **एल्यूरोन सतह** कहते हैं। भ्रूण आकार में छोटा होता है और यह भ्रूण पोष के एक सिरे पर खाँचे में स्थित होता है। इसमें एक बड़ा तथा ढालाकार बीजपत्र होता है जिसे **स्कुटेलम** कहते हैं। इसमें एक छोटा अक्ष होता है जिसमें **प्रांकुर** तथा **मूलांकुर** होते हैं। प्रांकुर तथा मूलांकुर एक चादर से ढके होते हैं, जिसे क्रमश: **प्रांकुरचोल** तथा **मूलांकुरचोल** कहते हैं। (चित्र 5.19)

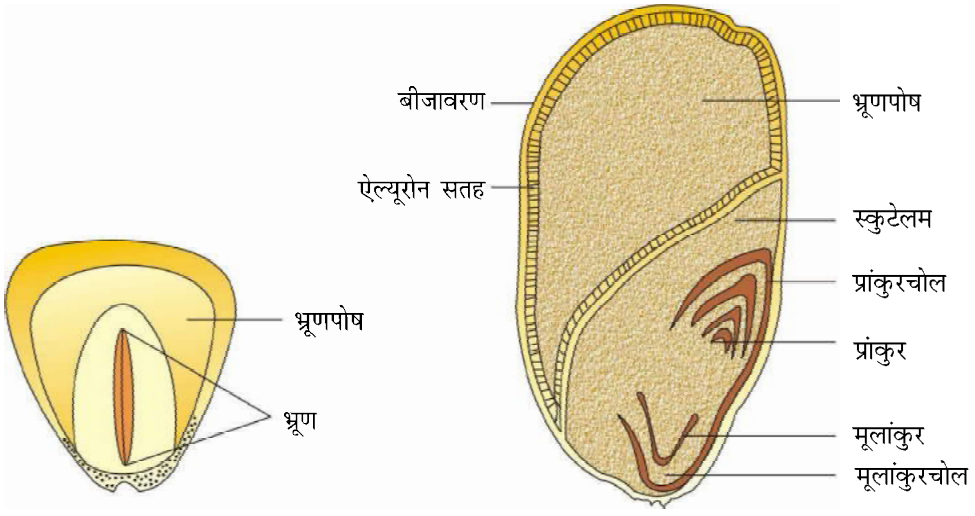

चित्र 5.19 एकबीजपत्री बीज की संरचना

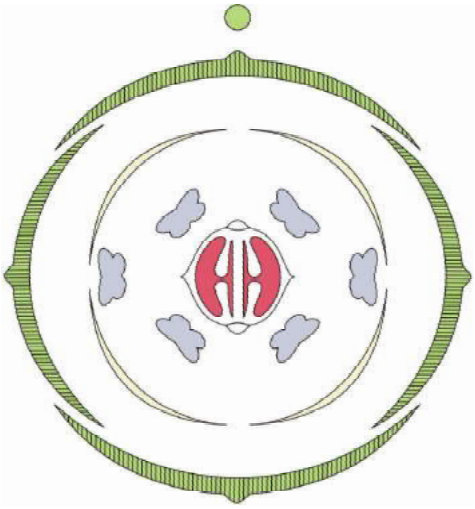

$\oplus \male\!\!\female K_{2+2} C_4 A_{2+4} \underline{G}_{(2)}$

चित्र 5.20 (अ) पुष्पीसूत्र
(ब) पुष्पी चित्र

5.8 एक प्ररूपी पुष्पीपादप (एंजियोस्पर्म) का अर्द्धतकनीकी विवरण

पुष्पीपादप को वर्णित करने के लिए बहुत से आकारिकी अभिलक्षणों का उपयोग किया जाता है। पुष्पीपादपों का वर्णन संक्षिप्त, सरल तथा वैज्ञानिक भाषा में क्रमवार होना चाहिए। पौधे के वर्णन में उसकी प्रकृति, कायिक अभिलक्षण मूल, तना तथा पत्तियाँ और उसके बाद पुष्पी अभिलक्षण, पुष्प विन्यास, फूल के भाग का वर्णन आता है। पौध के विभिन्न भागों के वर्णन के बाद पुष्पी भाग के पुष्पी चित्र तथा पुष्पी सूत्र बताने पड़ते हैं। पुष्पी सूत्र को कुछ संकेतों द्वारा इंगित किया जाता है। पुष्पी सूत्र में सहपत्र को **Br** से, केल्किस को **K** से, कोरोला को **C** से, परिदल पुंज को **P** से, पुमंग को **A** से तथा जायांग को **G** से लिखते हैं। ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय को **G** और अधोवर्ती अंडाशय को **$\underline{G}$** से लिखते हैं। नर फूल के लिए ♂ मादा के लिए ♀ तथा द्विलिंगी के लिए ⚥ चिह्नों से इंगित करते हैं। त्रिज्य सममिति को '⊕' तथा एक व्यास सममित को '%' इंगित करते हैं। युक्त दलों की संख्या को ब्रेकेट से बंद करते हैं और आसंजन को पुष्पी चिह्नों के ऊपर रेखा खींचते हैं। पुष्पीचित्र से फूल के भागों की संख्या, उनके विन्यस्त क्रम और उनके संबंध (चित्र 5.20) के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। मातृ अक्ष की स्थिति फूल के सापेक्ष होती है जिसे डॉट द्वारा पुष्पी चित्र के ऊपर इंगित करते हैं। केल्किस, कोरोला, पुमंग तथा जायांग क्रमवार चक्कर में दिखाए जाते हैं। कैल्किस सबसे बाहर की ओर तथा जायांग सबसे भीतर होता है। यह सासंजन तथा आसंजन को चक्कर के भागों तथा चक्कर के बीचों को इंगित करता है। नीचे सरसों के पौधे (कुटुंब: ब्रेसिकेसी) के पुष्पी चित्र तथा पुष्पी सूत्र नीचे दिखाए गए हैं (चित्र 5.20)।

5.9 कुछ महत्वपूर्ण कुलों का वर्णन

5.9.1 फाबेसी

इस कुल को पहले पैपिलिओनोइडी कहते थे। यह लेग्युमिनोसी कुल का उपकुल था। यह सारे विश्व में पाई जाती हैं। (चित्र 5.21)

कायिक अभिलक्षण

वृक्ष, झाड़ी, शाक, मूल ग्रंथियों सहित मूल
तना: सीधा अथवा प्रतान
पत्तियाँ: सरल, अथवा संयुक्त पिच्छाकर, एकांतर, पर्णाधार तल्पयुक्त, अनुपर्णी, जालिका शिराविन्यास

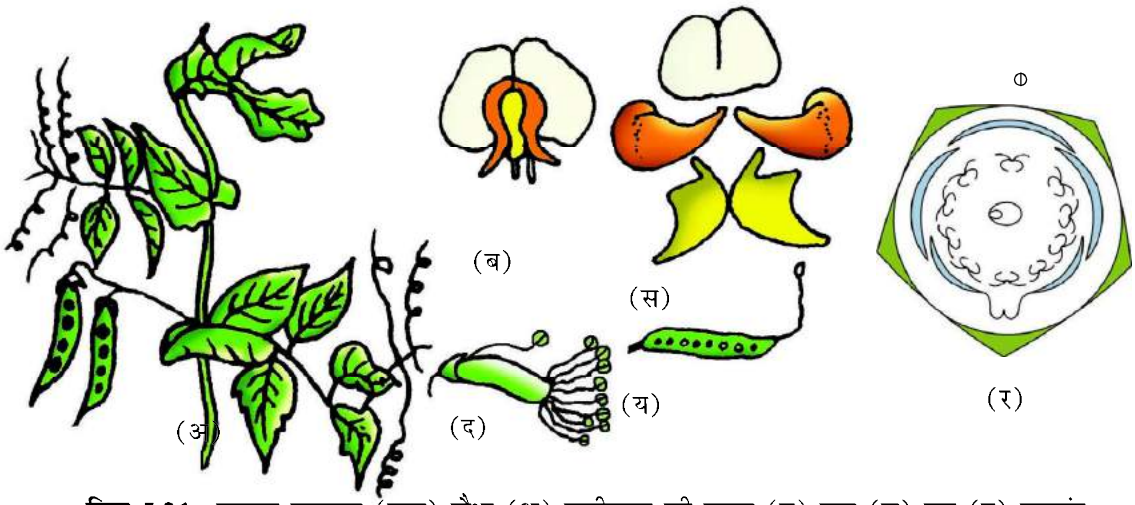

चित्र 5.21 पाइसम स्टाइवम (मटर) पौधा (अ) पुष्पीपादप की शाखा (ब) पुष्प (स) दल (द) जननांग (य) अंडप की अनुदैर्घ्यकाट (र) पुष्पीचित्र

पुष्पी अभिलक्षण

पुष्पविन्यास: असीमाक्षी
फूल: उभयलिंगी, एकव्याससममित
कैलिक्स: बाह्यदल पाँच, संयुक्तबाह्यदली, कोरस्पर्शी/कोरछादी, पुष्पदल विन्यास
कोरोला: दल पाँच, विमुक्त दली, पैपिलिओनेसियस पश्च बड़ा तथा सबसे बाहरी (स्टैंड्रड मानक), अगले दो पार्श्वीय (पंख-विंग) तथा दो अग्र तथा सबसे भीतर वाले जुड़कर एक नोतल बनाते हैं, पुष्प दल विन्यास वैकसीलेरी
पुमंग: 10 पुंकेसर, द्विसंधी, परागकोश द्विकोष्ठी
जायांग: अंडाशय एक अंडपी, ऊर्ध्ववर्ती, अनेकों बीजांड सहित एक कोष्ठीय, वर्त्तिका एकल
फल: लेग्यूम
बीज: एक से अधिक, अभ्रूणपोषीय

पुष्पी सूत्र: $\oplus \male K_{(5)}\, C_{1+2+(2)}\, A_{(9)+1}\, \underline{G}_1$

चित्र 5.21 *पाइसम स्टाइवम* (मटर) (अ) पुष्पी पादप की शाखा (ब) फूल (स) दल (द) लैंगिक अंग (इ) अंडप की अनुदैर्घ्यकाट (एफ) पुष्पी चित्र

आर्थिक महत्व

इस कुल के सदस्यों में अनेकों प्रकार की दाल (चना, अरहर, सेम, मूंग, सोयाबीन), खाद्य तेल (सोयाबीन, मूंगफली); रंग (नील); तंतु (सनई), चारा (संसवेनिया ट्राईफोलियम), सजावटी फूल (ल्यूपिन, स्वीअपी); औषधि (मुलैठी) के स्रोत हैं।

5.9.2 सोलैनेसी

यह एक बड़ा कुल है। प्राय: इसे आलू कुल भी कहते हैं। ये उष्णकटिबंधीय, उपोष्ण तथा शीतोष्ण में फैले रहते हैं। (चित्र 5.22)

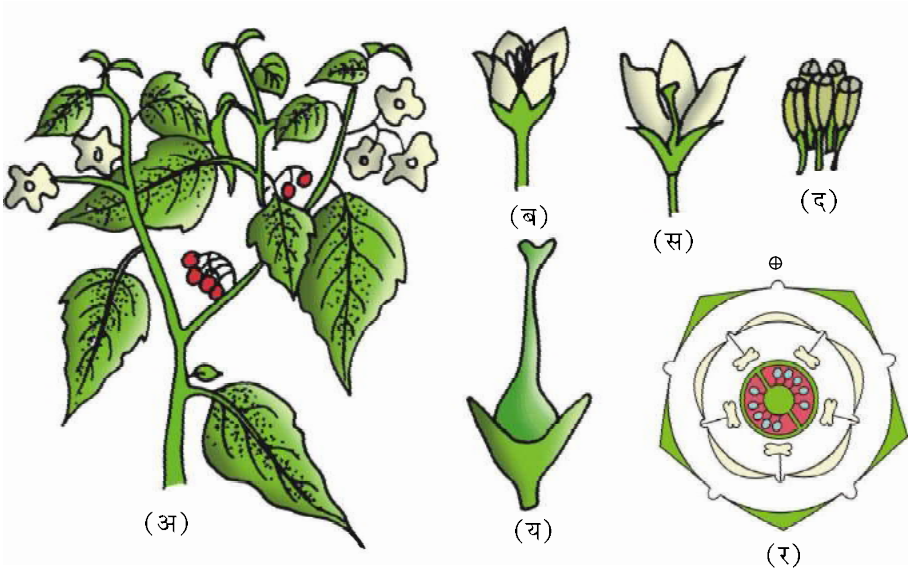

चित्र 5.22 सोलैनम नाइग्रम कोई को पौधा (अ) पुष्पीशाखा (ब) पुष्प (स) पुष्प की अनुदैर्घ्यकाट (द) पुंकेसर (य) अंडप (र) पुष्पी चित्र

कायिक अभिलक्षण

इसके पौधे प्रायः शाकीय, झाड़ियाँ तथा छोटे वृक्ष वाले होते हैं
तना: शाकीय, कभी-कभी काष्ठीय; वायवीय, सीधा, सिलिंडिराकर, शाखित, ठोस अथवा खोखला, रोमयुक्त अथवा अरोमिल, भूमिगत जैसे आलू (*सोलैनम टयूबीरोसम*),
पत्तियाँ: एकांतर, सरल, कर्मी संयुक्त पिच्छाकार अनुपर्णी, जालिका विन्यास
पुष्पी अभिलक्षण:
पुष्पक्रम: एकल, कक्षीय, ससीमाक्षी जैसे *सोलैनम* में;
फूल: उभयलिंगी, त्रिज्यसममिति
केल्किस: पाँच बाह्य दल, संयुक्त, दीर्घस्थायी, कोरस्पर्शी पुष्प दल विन्यास
कोरोला: पाँच दल, संयुक्त, कोरस्पर्शी पुष्पदल विन्यास
पुमंग: पाँच पुंकेसर, दललग्न
जायांग: द्विअंडपी, युक्तांडपी, अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती, द्विकोष्ठी, बीजांडासन फूला हुआ जिसमें बहुत से बीजांड
फल: संपुट अथवा सरस
बीज: भ्रूणपोषी, अनेक

पुष्पी सूत्र : $\oplus\ \male\ K_{(5)}\ \overset{\frown}{C_{(5)}\ A_{(5)}}\ \underline{G}_{(2)}$

आर्थिक महत्व

इस कुल के अधिकांश सदस्य भोजन (टमाटर, बैंगन, आलू), मसाले (मिर्च), औषधि (बेलाडोना, *अश्वगंधा*); धूमक (तंबाकू), सजावटी पौधे (पिटुनिआ) के स्रोत हैं।

5.9.3 लिलिएसी

इसे प्रायः लिली कुल कहते हैं। यह एकबीजपत्री हैं और सारे विश्व में पाए जाते है (चित्र 5.23)।

कायिक अभिलक्षणः दीर्घकालिक शाक सहित भूमिगत शल्ककंद/ कॉर्म/ प्रकंद
पत्तियाँः अधिकांश आधारी एकांतर, लंबे, अननुपर्णी समानांतर शिराविन्यास

पुष्पी अभिलक्षण

पुष्पक्रमः एकल / ससीमाक्ष, प्रायः पुष्प छत्र
फूलः त्रिज्याससमिति, द्विलिंगी
परिदल पुंजः परिदल छः (3+3) प्रायः नली में जुड़े हुए, कोरस्पर्शी पुष्पदल विन्यास
पुमंगः छः पुंकेसर 3+3, दललग्न
जायांगः त्रिअंडपी, युक्ताडंपी, अंडाशय ऊर्ध्ववर्ती, त्रिकोष्ठकी जिसमें अनेकों बीज, स्तंभीय बीजांडासन
फलः संपुट, कभी-कभी सरस
बीजः भ्रूणपोषीय

पुष्पी सूत्रः $Br \oplus \male\!\!\female \widehat{P_{(3+3)}A_{3+3}}\ Ca_{(3)}$

आर्थिक महत्व

इस कुल के अधिकांश पौधे सजावटी (टयुलिप, *ग्लोरिओसा*), औषधि के स्रोत (एलो), सब्जियाँ (एस्पेरेगस), तथा कॉल्चिसिन (*कॉल्चिकम ऑटुमनेल*) देने वाले होते हैं।

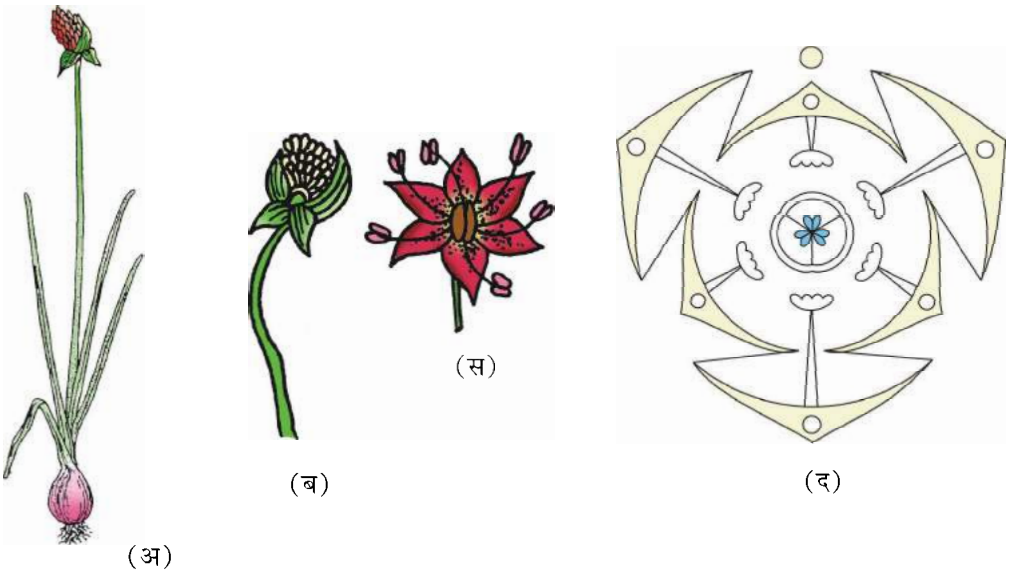

चित्र 5.23 एलियमसीपी (प्याज) का पौधों (अ) एक पौधा (ब) पुष्पक्रम (स) एक पुष्प (द) पुष्पी चित्र

सारांश

यदि हम समस्त पादप जगत पर दृष्टि डालें तो पुष्पीय पादप सर्वाधिक विकसित होते हैं। ये आकार, माप, संरचना, पोषण की विधि, जीवन काल, प्रकृति तथा आवास में अत्यधिक विविधता प्रदर्शित करते हैं। इनमें मूल तथा प्ररोह तंत्र भली भाँति विकसित होते हैं। इनमें मूल तंत्र मूसला अथवा झकड़ा मूल पाई जाती हैं। समान्यता द्विबीजपत्री पादपों में मूसला जबकि एक बीजपत्री पादपों में झकड़ा मूल होती हैं। कुछ पादपों में मूल भोजन के संग्रहण तथा यांत्रिक सहारे तथा श्वसन के लिए रूपांतरित हो जाती हैं। प्ररोह तंत्र तना, पत्ती, पुष्प तथा फलों में बँटा रहता है। तने के आकारिकीय अभिलक्षण जैसे गाँठों तथा पोरियों की उपस्थिति, बहुकोशिक रोम, तथा घनात्मक प्रकाशानुवर्ती प्रकृति आदि की उपस्थिति से तने तथा मूल में अंतर को आसानी से समझा जा सकता है। तने भी विभिन्न कार्यों जैसे खाद्य संचयन, कायिक प्रवर्धन तथा विभिन्न परिस्थितियों में संरक्षण के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेते हैं। पत्ती तने की पार्श्वीय उर्द्धव पर गांठ से बर्हिजाति रूप में विकसित होती है। यह रंग में हरी होती है ताकि प्रकाश संश्लेषण को क्रिया संपन्न हो सके। पत्तियां आकार, माप, किनारे, शीर्ष, तथा पत्ती की स्तरिका के कटाव में सुस्पष्ट विविधताएं प्रदर्शित करती हैं। पादपों के अन्य भागों की भांति पत्तियां भी अन्य भागों जैसे प्रतान, चढ़ने के लिए तथा शूल संरक्षण के लिए अपने आप को रूपांतरित कर लेती हैं।

पुष्प एक प्रकार के प्ररोह का रूपांतरित रूप है जो लैंगिक जनन संपन्न करता है। पुष्प विभिन्न प्रकार के पुष्पक्रम में विन्यस्त रहते हैं। यह संरचना, ज्यामिति, अन्य भागों के सापेक्ष अंडाशय की स्थिति, दलों बाह्य दलों, अंडाशय आदि का क्रमबद्ध विन्यास में भी विविधता प्रदर्शित करता है। निषेचन के पश्चात अंडाशय से फल तथा बीजांड से बीजों का निर्माण होता है। बीज एकबीजपत्री अथवा द्विबीजपत्रीय हो सकते हैं वे आकार, माप तथा जीवन क्षमता काल में विविध रूप के होते हैं। पुष्पीय अभिलक्षण पुष्पीय पादपों के वर्गीकरण तथा पहचान के आधार माने जाते हैं। इसका वर्णन कुलों के अर्द्ध तकनीकी विवरण से चित्रों सहित किया जा सकता है। अत: एक पुष्पी पादप का वर्णन वैज्ञानिक शब्दावली का उपयोग करते हुए निर्दिष्ट क्रम में कर सकते हैं। पुष्पीय अभिलक्षण संक्षिप्त रूप पुष्पीय चित्रों, पुष्पीय अंगों द्वारा निरूपित कर सकते हैं।

अभ्यास

1. मूल के रूपांतरण से आप क्या समझते हैं? निम्नलिखित में किस प्रकार का रूपांतरण पाया जाता है।
   (अ) बरगद (ब) शलजम (स) मैंग्रोव वृक्ष
2. बाह्य लक्षणों के आधार पर निम्नलिखित कथनों की पुष्टि करें
   (i) पौधे के सभी भूमिगत भाग सदैव मूल नहीं होते
   (ii) फूल एक रूपांतरित प्ररोह है
3. एक पिच्छाकार संयुक्त पत्ती हस्ताकार संयुक्त पत्ती से किस प्रकार भिन्न है?
4. विभिन्न प्रकार के पर्णविन्यास का उदाहरण सहित वर्णन करो।

5. निम्नलिखित की परिभाषा लिखो।
   (अ) पुष्प दल विन्यास (ब) बीजांडासन (स) त्रिज्या सममिति (द) एकव्यास सममित
   (इ) ऊर्ध्ववर्ती (एफ) परिजायांगी पुष्प (जी) दललग्न पुंकेसर
6. निम्नलिखित में अंतर लिखो।
   (अ) असीमाक्षी तथा ससीमाक्षी पुष्पक्रम
   (ब) झकड़ा जड़ (मूल) तथा अपस्थानिक मूल
   (स) वियुक्तांडपी तथा युक्तांडपी अंडाशय
7. निम्नलिखित के चिंह्नित चित्र बनाओ
   (अ) चने के बीज तथा (ब) मक्के के बीज का अनुदैर्घ्यकाट
8. उचित उदाहरण सहित तने के रूपांतरों का वर्णन करो
9. फाबसी तथा सोलैनेसी कुल के एक-एक पुष्प को उदाहरण के रूप में लो तथा उनका अर्द्धतकनीकी विवरण प्रस्तुत करो। अध्ययन के पश्चात उनके पुष्पीय चित्र भी बनाओ।
10. पुष्पी पादपों में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के बीजांडासन्यासों का वर्णन करो।
11. पुष्प क्या है? एक प्ररूपी एंजियोस्पर्म पुष्प के भागों का वर्णन करो।
12. पत्तियों के विभिन्न रूपांतरण पौधे की केसे सहायता करते हैं?
13. पुष्पक्रम की परिभाषा करो। पुष्पी पादपों में विभिन्न प्रकार के पुष्पक्रमों के आधार का वर्णन करो।
14. ऐसे फूल का सूत्र लिखो जो त्रिज्या सममित, उभयलिंगी, अधोजायांगी, 5 सयुंक्त बाह्य दली, 5 मुक्त दली, पाँच मुक्त पुंकेसरी, द्वि युक्तांडपी, तथा ऊर्ध्ववती अंडाशय हो।
15. पुष्पासन पर स्थिति के अनुसार लगे पुष्पी भागों का वर्णन करो।

अध्याय 6

पुष्पी पादपों का शारीर

6.1 *ऊतक*

6.2 *ऊतक तंत्र*

6.3 *द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादपों का शारीर*

6.4 *द्वितीयक वृद्धि*

आप बड़े प्राणियों पादप तथा जंतु (प्राणी)-दोनों में रचनात्मक समानता तथा बाह्य आकारिकी में विभिन्नता देख सकते हैं। इस प्रकार जब हम भीतरी रचना का अध्ययन करते हैं, तब हमें बहुत सी समानताओं तथा विभिन्नताओं का पता लगता है। इस अध्याय में हम उच्च पौधों में भीतरी रचनात्मक तथा कार्यात्मक संरचनाओं के विषय में पढ़ेंगे। पौधों की भीतरी संरचना के अध्ययन को शारीर कहते हैं। पौधों में कोशिका आधार भूत इकाई है। कोशिकाएँ ऊतकों में और ऊतक अंगों में संगठित होते हैं। पौधे के विभिन्न अंगों की भीतरी संरचना में अंतर होता है। एंजियोस्पर्म में ही एकबीजपत्री की शारीरीकी द्विबीजपत्री से भिन्न होती है। भीतरी संरचना पर्यावरण के प्रति अनुकूलन को भी दर्शाती है।

6.1 ऊतक

ऊतक कोशिकाओं का एक ऐसा वर्ग है जिसका उद्भव एक ही होता है और उनके कार्य भी प्रायः समान होते हैं। पौधे विभिन्न प्रकार के ऊतक होते हैं। ऊतक को दो प्रमुख वर्गविभज्योतकी (मेरिस्टमी) तथा स्थायी ऊतक होते हैं। इनके वर्गीकरण का आधार कोशिकाओं का विभक्त होना अथवा न होना है।

6.1.1 मेरिस्टमी ऊतक

पौधों में वृद्धि मुख्यतः सक्रिय कोशिका विभाजन वाले विशिष्ट क्षेत्रों तक ही सीमित होती है। इस क्षेत्र को **मेरिस्टम** कहते हैं (*ग्रीक* भाषा में *मेरिस्टो* - विभाजित)। पौधे में विभिन्न प्रकार के मेरिस्टेम होते हैं। जो मेरिस्टेम मूल तथा तने के शीर्ष पर होते हैं। वह प्राथमिक ऊतक बनाते हैं, उन्हें **शीर्षस्थ मेरिस्टेम** कहते हैं (चित्र 6.1)। मूल शीर्षस्थ मेरिस्टेम मूल

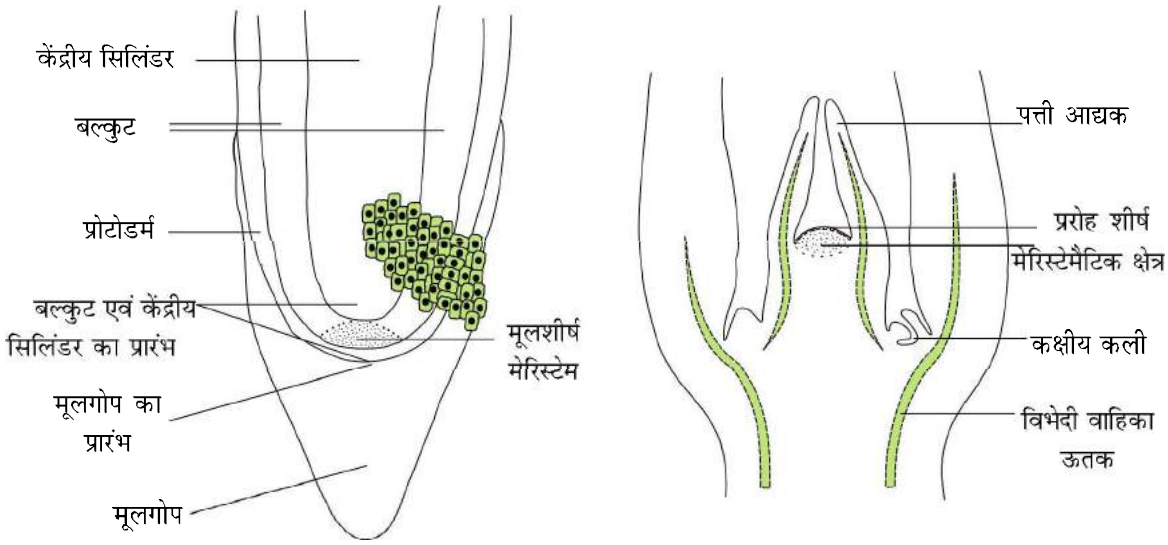

चित्र 6.1 शीर्षस्थ मेरिस्टेम (ब) मूल (ब) प्ररोह

की चोटी पर तथा तने की शीर्षस्थ मेरिस्टेम तने की चोटी पर स्थित होते है। पत्तियों के बनने तथा तने की लंबाई के समय कुछ कोशिकाएँ प्ररोह शीर्षस्थ मेरिस्टेम के पीछे छूट जाती हैं। इन्हें **कक्षीय कली** कहते हैं ऐसी कलियाँ पत्तियों के कक्ष में स्थित होती हैं। इन कलियों से शाखा अथवा फूल बनते हैं। जब मेरिस्टेम स्थायी ऊतकों के बीच होता है तब उसे **अंतर्वेशी मेरिस्टेम** कहते हैं। ये घास में होते हैं और शाकाहारियों द्वारा खाए भाग को पुनर्जीवित करते हैं। शीर्षस्थ मेरिस्टेम तथा अंतर्वेशी मेरिस्टेम दोनों ही **प्राथमिक मेरिस्टेम** हैं, क्योंकि वे पौधे की प्रारंभिक अवस्था में ही आ जाते हैं प्राथमिक या पूर्ववर्ती पादपकाय बनाने में सहायता करते हैं।

मेरिस्टेम जो बहुत से पौधों की मूल तथा प्ररोह के परिपक्व क्षेत्रों में होते हैं, विशेषत रूप से, ये काष्ठीय कक्ष बनाते हैं और प्राथमिक मेरिस्टेम के बाद उत्पन्न होते हैं, उन्हें **द्वितीयक** अथवा **पार्श्वीय मेरिस्टेम** कहते हैं। ये सिलिंडिराकार मेरिस्टेम होते हैं पूलीय कैंबियम, अंतरापूलीय कैंबियम तथा कॉर्क कैंबियम पार्श्वीय कैंबियम के उदाहरण हैं।

प्राथमिक तथा द्वितीयक दोनों मेरिस्टेमों में कोशिका विभाजन के बाद, नई-नई कोशिकाएँ बनती हैं जो रचनात्मक एवं क्रियात्मक रूप से विशिष्ट होती हैं और उनमें विभाजन की क्षमता नहीं होती। ऐसी कोशिकाओं को स्थायी अथवा **परिपक्व** कोशिकाएं कहते हैं। ये कोशिकाएं स्थायी ऊतक बनाती हैं। पौधे की प्रारंभिक काय बनने के समय शीर्षस्थ मेरिस्टेम के विशिष्ट क्षेत्रों से त्वचीय ऊतक, भरण ऊतक तथा संवहन ऊतक बनते हैं।

6.1.2 स्थायी ऊतक

स्थायी ऊतक की कोशिकाएं प्रायः और अधिक विभक्त नहीं होती। स्थायी ऊतक जिनसे कोशिका की रचना होती है तथा उनके कार्य एक समान होते हैं, उन्हें **सरल ऊतक** कहते हैं। स्थायी ऊतक जिनमें विभिन्न प्रकार की कोशिकाएं होती हैं उन्हें **जटिल ऊतक** कहते हैं।

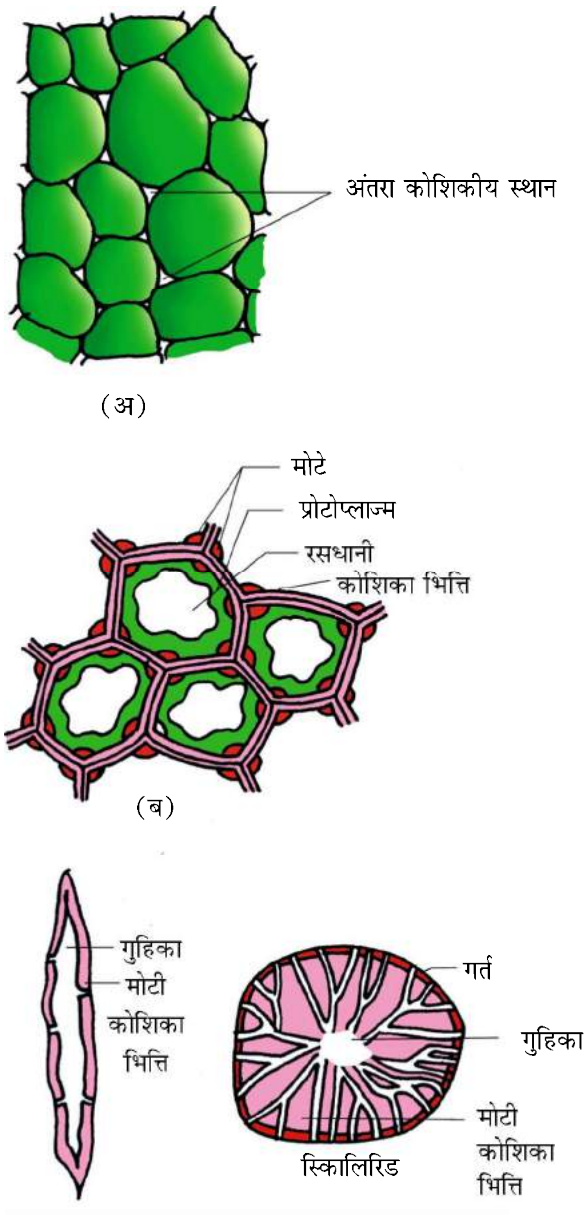

चित्र 6.2 सरल ऊतक (अ) पैरेंकाइमा (ब) कोलेंकाइमा (स) स्कलेरंकाइमा

6.1.2.1 सरल ऊतक

सरल ऊतकों में केवल एक ही प्रकार की कोशिकाएं होती हैं। पौधों में विभिन्न प्रकार के सरल ऊतक पाए जाते हैं। जैसे पैरेंकाइमा, कॉलेंकाइमा तथा स्कलरेंकाइमा (दृढ़ोतक) (चित्र 6.2)। **पैरेंकाइमा** अंगों के अंदर के मुख्य घटक हैं। पैरेंकाइमा की कोशिकाएं समव्यासीय (आइसोडायामिट्रिक) होती हैं। उनका आकार गोलाकार, अंडाकार, बहुकोणीय अथवा लंबाकार हो सकता है। उनकी भित्ति पतली होती है और वे सेल्यूलोज की बनी होती हैं। ये काफी सटी हो सकती हैं अथवा उनके बीच थोड़ा अंतराकोशिकीय स्थान हो सकता है। पैरेंकाइमा बहुत से कार्य जैसे प्रकाश-संश्लेषण, संचय, स्राव संपन्न करते हैं।

कॉलेंकाइमा द्विबीजपत्री पौधों की बाह्यत्वचा के नीचे होते हैं। यह या तो एक समान सतह में होते हैं अथवा चकती में होते हैं। इनकी कोशिकाओं की भित्ति पतली होती है लेकिन इनके कोनों पर सेल्यूलोज, हैमीसेल्यूलोज तथा पैक्टिन जमा होती है, इसलिए इनके कोने मोटे होते हैं। कॉलेंकाइमा की कोशिकाओं का आकार, अंडाकर, गोलाकार अथवा बहुकोणीय हो सकता है। इनमें प्राय: क्लोरोप्लास्ट होता है। इनकी कोशिकाओं में जब क्लोरोप्लास्ट स्थित होता है, तब वे भोजन का स्वांगीकरणी भी कर सकते हैं। इनमें अंतराकोशिकीय स्थान नहीं होता । ये पौधों के वृद्धि हो रहे भागों जैसे शैशव तना तथा पत्ती का वृंत को यांत्रिक सहारा प्रदान करती हैं।

स्क्लेरेंकाइमा में लंबी, संकरी कोशिकाएं होती हैं। इन कोशिकाओं की भित्ति मोटी तथा लिग्निनी होती है। इसकी भित्ति पर कुछ अथवा अधिक गर्त स्थित होते हैं। अधिकांशत: ये मृत होते हैं और उनमें प्रोटोप्लास्ट नहीं होता। आकार, रचना, उद्‌भव तथा विकास में विभिन्नता होने के आधार पर स्कलेरेंकाइमा तंतुमयी अथवा स्किलिरीड हो सकते हैं। **तंतु** मोटी भित्ति वाले, लंबे तथा नुकीले मृत कोशिकाएं के होते हैं। ये प्राय: पौधों के विभिन्न भागों में समूह के रूप में पाए जाते हैं। **स्किलिरिड** का आकार गोलाकार, अंडाकार अथवा सिलिंडराकार होता है। ये बहुत अधिक मोटे तथा मृत स्कलेरेंकाइमी कोशिकाओं से बने होते हैं, जिनकी गुहिका बहुत से संकरी होती है। ये प्राय: गिरीदार फलों की फल भित्ति की कोशिकाओं, फलों जैसे अमरुद,

नाशपाती तथा चीकू के गूदे; तथा लैग्यूमों के बीज आवरण तथा चाय की पत्ती में पाए जाते हैं। स्कलेरेंकाइमा पौधों को यांत्रिक सहारा देते हैं। स्थायी

6.1.2.2 जटिल ऊतक

जटिल ऊतक में एक से अधिक प्रकार की कोशिकाएं होती हैं, ये मिलकर एक इकाई की तरह कार्य करती है। जाइलम तथा फ्लोएम जटिल ऊतक के उदाहरण हैं (चित्र 6.3)।

जाइलम मूल से पानी तथा खनिज लवण को तने तथा पत्तियों तक पहुँचाने के लिए एक संवहन ऊतक की तरह कार्य करता है। यह पौधे के अंगों को यांत्रिक सहारा भी देता है। ये चार तत्वों **वाहिनिकी (ट्रैकीड)**, वाहिका, जाइलम तंतु तथा जाइलम पैरेंकाइमा से मिलकर बना है। वाहिनिकी लंबी अथवा नलिकाकार कोशिका है। इसकी कोशिका की भित्ति मोटी तथा लिग्निनी होती है और गुहिका शुंडाकार होती है। ये मृत तथा प्रोटोप्लाज्म विहीन होती है। इसकी कोशिका की भीतरी भित्ति की सतह मोटी होती है जिनकी आकृति विभिन्न होती है। पुष्पी पादपों में वाहिनिकी तथा वाहिका पानी के स्थानांतरण के लिए मुख्य अवयव हैं।

वाहिका लंबी, सिलिंडराकार नली है। इसमें बहुत सी कोशिकाएँ होती है जिन्हें वाहिका अवयव कहते हैं। प्रत्येक की भित्ति लिग्निनी होती है और उसमें बड़ी केंद्र गुहिका होती है। वाहिका में प्रोटोप्लाज्म नहीं होता। ये लंबवत एक दूसरे के साथ एक छिद्रित पाइप की भांति जुड़े रहते हैं। वाहिका का होना एंजियोंस्पर्म का एक प्रमुख गुण है। **जाइलम तंतु** की भित्ति मोटी होती है तथा इसकी केंद्रीय गुहिका विलुप्त होती है। ये पटीय तथा अपटीय हो सकती हैं। **जाइलम पैरेंकाइमा** कोशिकाएं जीवित होती हैं तथा इनकी भित्ति पतली होती है और सेल्युलोज की बनी होती हैं। इनमें स्टार्च तथा वसा तथा अन्य पदार्थ जैसे टैनीन भोजन के रूप में संचित रहता है। पानी का त्रिज्य संवहन रेपैरेंकाइमा कोशिकाओं द्वारा होता है।

प्राथमिक जाइलम दो प्रकार का होता है- आदिदारु (प्रोटोजाइलम) तथा मेटाजाइलम सबसे पहले बनने वाले जाइलम को **प्रोटोजाइलम** तथा बाद में बनने वाले को **मेटाजाइलम** कहते हैं। तने में प्रोटोजाइलम केंद्र (पिथ) की ओर तथा मेटाजाइलम परिधि की ओर होते हैं। इस प्रकार के जाइलम को **मध्यादिदारुक** कहते हैं। मूल में प्रोटोजाइलम परिधि की ओर होते हैं और मेटाजाइलम केंद्र (पिथ) की ओर होते हैं। इस प्रकार के जाइलम को **बाह्य आदिदारुक** कहते हैं।

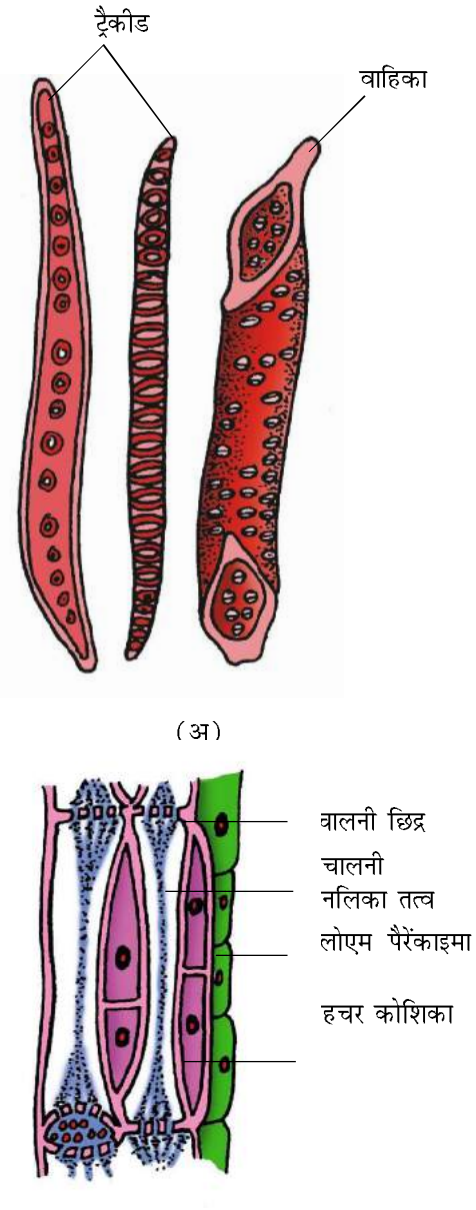

चित्र 6.3 (अ) जाइलम
(ब) फ्लोएम ऊतक

फ्लोएम प्राय: भोजन को पत्तियों से पौधे के अन्य भागों में पहुंचाते हैं। एंजियोस्पर्म में स्थित फ्लोएम में चालनी नलिकाएं, तत्व, सहचर कोशिकाएं, फ्लोएम पैरेंकाइमा तथा फ्लोएम तंतु होते हैं। जिम्नोस्पर्म में एलब्यूमिनी कोशिकाएँ होती है। **चालनी नलिका** तत्व लंबे, नलिका की तरह की संरचना, लंबवत तथा सहचर कोशिकाओं से जुड़ी हुई होती हैं। इनकी अंत:भित्ति चालनी की तरह छिद्रित होती है जो चालनी प्लेट बनाती है। एक परिपक्व चालनी तत्व में परिधीय साइटोप्लाज्म तथा बड़ी रसधानी होती है, लेकिन इसमें केंद्रक नहीं होता। चालनी नली के कार्य को सहचर के केंद्रक नियंत्रित करते हैं। **सहचर कोशिकाएं** विशिष्ट पैरेंकाइमी कोशिकाएं हैं। ये चालनी नली के तत्वों से सटी रहती हैं। चालनी नली तत्व तथा सहचर कोशिकाएं गर्त क्षेत्र से जुड़ी रहती हैं। ये क्षेत्र अनुदैर्घ्य भित्तियों के बीच में होते हैं। सहचर कोशिकाएं चालनी नली में दाब ग्रेडिएंट (विभव) को बनाए रखती है। **फ्लोएम पैरेंकाइमा** में लंबी शुंडीय सिलिंडराकार कोशिकाएं होती हैं जिनमें सघन साइटोप्लाज्म तथा केंद्रक होता है। कोशिका भित्ति सेल्यूलोज की बनी होती है और उसमें गर्त होते हैं। इनके द्वारा कोशिकाओं के बीच प्लैज्मोडेस्मेटा जोड़ होता है। फ्लोएम पैरेंकाइमा खाद्य पदार्थ तथा अन्य पदार्थों जैसे रेजिन, लेटेक्स तथा म्युसिलेज संचित करता है। एक बीजपत्री पौधों में फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं होते। **फ्लोएम तंतु** (बास्ट रेशा) स्कलेरेंकाइमी कोशिकाओं के बने होते हैं। ये प्राय: प्राथमिक फ्लोएम में नहीं पाए जाते; लेकिन ये द्वितीयक फ्लोएम में रहते हैं। ये काफी लंबे, अशाखित तथा नुकीले होते हैं इनके सिरे सुई की तरह के होते हैं। फ्लोएम तंतु की कोशिका भित्ति काफी मोटी होती है। परिपक्वता पर इन तंतु में प्रोटोप्लाज्म समाप्त हो जाता है और वे मृत हो जाते हैं। पटसन, सन तथा भांग जैसे पौधों के प्लोएम तंतु का बहुत आर्थिक महत्व है। सबसे पहले बनने वाले फ्लोएम में संकरी चालनी नली होती हैं। ऐसे फ्लोएम को **प्राक्फ्लोएम (प्रोटोफ्लोएम)** कहते हैं। बाद में बनने वाले फ्लोएम में बड़ी चालनी नली होती हैं और उसे **अनुफ्लोएम (मेटाफ्लोएम)** कहते हैं।

6.2 ऊतक तंत्र

हम अब तक विभिन्न प्रकार के ऊतकों तथा उनमें स्थित कोशिकाओं के प्रकार के आधार पर चर्चा कर रहे थे। आओ, अब हम देखें कि पौधे के विभिन्न स्थानों पर स्थित ऊतक कैसे एक दूसरे से भिन्न होते हैं। उनकी रचना तथा कार्य भी उनकी स्थिति के अनुसार होते हैं। रचना तथा स्थिति के आधार पर ऊतक तंत्र तीन प्रकार का होता है। ये तंत्र हैं- बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र, भरण अथवा मौलिक ऊतक तंत्र, संवहनी ऊतक तंत्र।

6.2.1 बाह्य त्वचीय ऊतक तंत्र

बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र पौधे का सबसे बाहरी आवरण है। इसके अंर्तगत बाह्य त्वचीय कोशिकाएं रंध्र तथा बाह्यत्वचीय उपांग - मूलरोम आते हैं। **बाह्यत्वचा** पौधों के भागों की बाहरी त्वचा है। इसकी कोशिकाएं लंबी तथा एक दूसरे से सटी हुई होती हैं और एक अखंड सतह बनाती है। बाह्यत्वचा प्राय: एकल सतह वाली होती है। बाह्यत्वचीय

कोशिकाएं पैरेंकाइमी होती है जिनमें बहुत कम मात्रा में साइटोप्लाज्म होता है जो कोशिका भित्ति के साथ होता है। इसमें एक बड़ी रसधानी होती है। बाह्यत्वचा की बाहरी सतह मोम की मोटी परत से ढकी होती है, जिसे **क्यूटिकल** कहते हैं। क्यूटिकल पानी की हानि को रोकती है। मूल में क्यूटिकल नहीं होती।

रंध्र ऐसी रचनाएँ हैं, जो पत्तियों की बाह्यत्वचा पर होते हैं। रंध्र वाष्पोत्सर्जन तथा गैसों के विनिमय को नियमित करते हैं। प्रत्येक रंध्र में दो सेम के आकार की दो कोशिकाएं होती हैं जिन्हें **द्वारकोशिकाएं** कहते हैं। घास में द्वार कोशिकाएं डंबलाकार होती हैं। द्वारकोशिका की बाहरी भित्ति पतली तथा आंतरिक भित्ति मोटी होती है। द्वार कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट होता है और यह रंध्र के खुलने तथा बंद होने के क्रम को नियमित करता है। कभी-कभी कुछ बाह्यत्वचीय कोशिकाएं जो रंध्र के आस-पास होती हैं। उनकी आकृति, माप तथा पदार्थों में विशिष्टता आ जाती है। इन कोशिकाओं को **सहायक कोशिकाएं** कहते हैं। रंध्रीय छिद्र, द्वारकोशिका तथा सहायक कोशिकाएं मिलकर **रंध्री तंत्र** का निर्माण करती हैं (चित्र 6.4)।

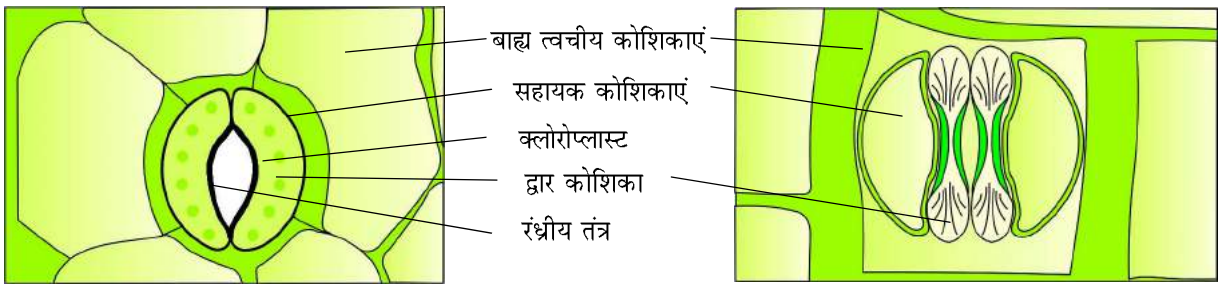

चित्र 6.4 रंध्री तंत्र (अ) सेम के आकार वाली द्वार कोशिका सहित रंध्र (ब) डंबलाकार द्वार कोशिका सहित रंध्र

बाह्यत्वचा की कोशिकाओं पर अनेक रोम होते हैं। इन्हें मूलरोम कहते हैं ये बाह्यत्वचा की कोशिकाओं का एककोशिकीय दीर्घीकरण स्वरूप होती है जो जल एवं खनिजतत्वों के अवशोषण में सहायक होती हैं। तने पर पाए जाने वाले ये बाह्य त्वचीय रोम **त्वचारोम** (ट्राइकोम्स) कहलाते हैं प्ररोह तंत्र में यह त्वचारोम बहुकोशिकीय होते हैं। ये शाखित या अशाखित तथा कोमल या नरम हो सकते हैं ये स्रावी हो सकते हैं ये वाष्पोतसर्जन से होने वाले जल की हानि रोकते हैं।

6.2.2 भरण ऊतक तंत्र

बाह्यत्वचा तथा संवहन बंडल के अतिरिक्त सभी ऊतक **भरण ऊतक** बनाते हैं। इसमें सरल ऊतक जैसे पैरेंकाइमा, कॉलेंकाइमा तथा स्कलेरेंकाइमा होते हैं। प्राथमिक तने में पेरेंकाइमी कोशिकाएं प्राय: वल्कुट, (कॉर्टेक्स) परिरंभ, पिथ तथा मज्जाकिरण में होती हैं। पत्तियों में भरण ऊतक पतली भित्ति वाले तथा क्लोरोप्लास्ट युक्त होते हैं और इसे **पर्णमध्योतक** (मेजोफिल) कहते हैं।

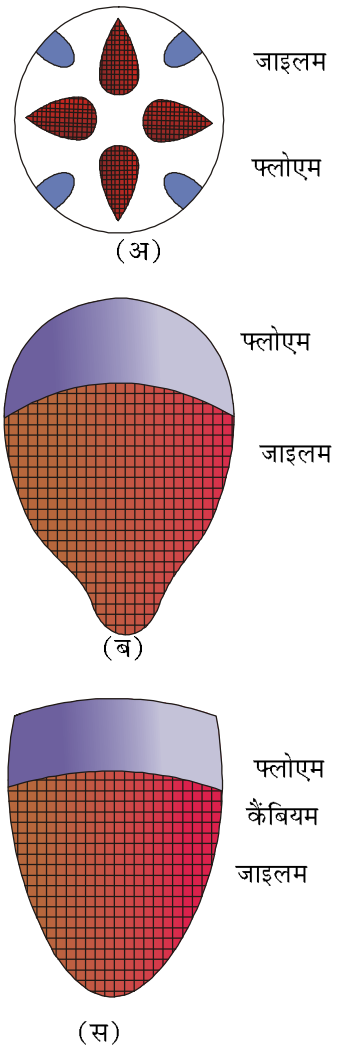

चित्र 6.5 विभिन्न प्रकार के संवहन बंडल (अ) अरीय (ब) संयुक्त बंद (स) संयुक्त खुला

6.2.3 संवहनी ऊतक तंत्र

संवहनी तंत्र में जटिल ऊतक, जाइलम तथा फ्लोएम होते हैं। जाइलम तथा फ्लोएम दोनों मिलकर संवहन बंडल बनाते हैं (चित्र 6.5)। द्विबीजपत्री में जाइलम तथा फ्लोएम के बीच **कैंबियम** होता है। ऐसे संवहनी बंडलों जिनमें कैंबियम होता है और वे लगातार द्वितीयक जाइलम तथा फ्लोएम बनाते रहते हैं उन्हें **खुला संवहन बंडल** कहते हैं। एकबीजपत्री पादपों में कैंबियम नहीं होता। चूंकि वे द्वितीयक ऊतक नहीं बनाते इसलिए उन्हें **बंद संवहन बंडल** कहते हैं।

जब जाइलम तथा फ्लोएम एकांतर तरीके से भिन्न त्रिज्या पर होते हैं, तब ऐसे बंडल को **अरीय** कहते है जैसे मूल में। संयुक्त बंडल में जाइलम तथा फ्लोएम एक ही त्रिज्या पर स्थित होते हैं जैसे तने तथा पत्तियों में। **संयुक्त संवहन** बंडल में प्राय: फ्लोएम जाइलम के बाहर की ओर स्थित होता है।

6.3 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादपों का शारीर

मूल, तने तथा पत्तियों में ऊतक की संरचना का भलीभाँति अध्ययन करने के लिए पौधे के इन भागों की परिपक्व अनुप्रस्थ काट का अध्ययन करना चाहिए।

6.3.1 द्विबीजपत्री मूल

चित्र 6.6 (अ) को देखो। इसमें सूरजमुखी मूल की अनुप्रस्थ काट को दिखाया गया है। भीतरी ऊतकों के विन्यास को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया गया है।

सबसे बाहरी भित्ति **बाह्यत्वचा** है। इसमें नलिकाकार सजीव घटक होते हैं। इनमें से कुछ कोशिकाएँ बाहर की ओर निकली होती हैं जो एक **कोशिकीय मूल रोम** बनाती हैं। वल्कुट में पतली भित्ति वाली पैरेंकाइमी कोशिकाओं की कई परतें होती हैं। इनके बीच में **अंतराकोशिकीय** स्थान होता है। वल्कुट की सबसे भीतरी परत अंतस्त्वचा होती है। इसमें नालाकर की कोशिकाओं की एकल सतह होती है। इन कोशिकाओं में अंतरा कोशिकीय स्थान नहीं

होता। अंतस्त्वचा की कोशिकाओं की स्पर्श रेखीय तथा अरीय भित्तियों पर **कैस्पेरी पट्टियों** के रूप में जल अपारगम्य, मोमी पदार्थ सूवेरिन होता है। अंतस्त्वचा से भीतर की ओर मोटी भित्ति पैरेंकाइमी कोशिकाएँ होती हैं जिसे **परिरंभ** कहते हैं। इन कोशिकाओं में द्वितीयक वृद्धि के दौरान संवहन कैंबियम तथा पार्श्वीय मूल प्रेरित होती है। पिथ छोटी अथवा अस्पष्ट होती है। पैरेंकाइमी कोशिकाएँ जो जाइलम तथा फ्लोएम बंडल के बीच में हैं उन्हें **कंजकटिव ऊतक** कहते हैं। दो से चार तक जाइलम तथा फ्लोएम के खंड होते हैं। इसके बाद जाइलम तथा फ्लोएम के बीच एक कैंबियम छल्ला बनता हैं अंतस्त्वचा के अंदर की ओर सारे ऊतक जैसे परिरंभ, संवहन ऊतक तथा पिथ मिलकर **रंभ** (स्टेल) बनाते हैं।

6.3.2 एकबीजपत्री मूल

एक बीजपत्री मूल का शारीर बहुत अधिक द्विबीजपत्री मूल के शारीर के समान होता है (चित्र 6.6 ब)। इसमें बाह्यत्वचा, वल्कुट, अंतस्त्वचा, परिरंभ, संवहन बंडल तथा पिथ होते हैं। एक बीजपत्री में इनकी संख्या प्रायः छः से अधिक (बहु-आदिदारुक) होती है जबकि द्विबीजपत्री में कुछ ही जाइलम बंडल होते हैं। पिथ बड़ी तथा बहुत विकसित होती है तथा एकबीजपत्री मूल में कैंबियम नहीं होता। इसलिए इसमें द्वितीयक वृद्धि नहीं होती है।

6.3.3 द्विबीजपत्री तना

एक प्ररुप शैशव द्विबीजपत्री तने की अनुप्रस्थ काट में निम्नलिखित संरचनाएँ होती हैं। **बाह्यत्वचा** तने की सबसे बाहरी रक्षी सतह है (चित्र 6.7 अ)। यह क्यूटीकल पतली परत से ढकी होती है। इस पर कुछ बहुकोशकीय, एक पंक्तिक त्वचारोम तथा कुछ रंध्र होते हैं। बाह्यत्वचा तथा परिरंभ के बीच कोशिकाओं की बहुत सी सतहें होती है, जिसे वल्कुट कहते है। इसके तीन क्षेत्र होते हैं। **बाहरी अधस्त्वचा** (हाइपोडमिंस) ये

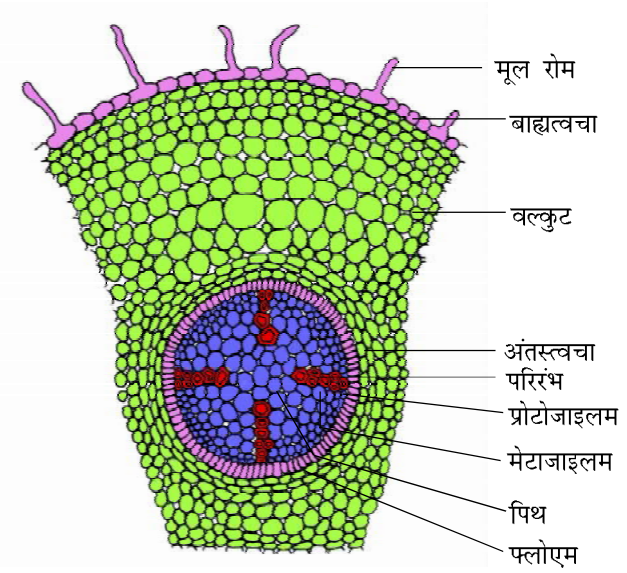

(अ)

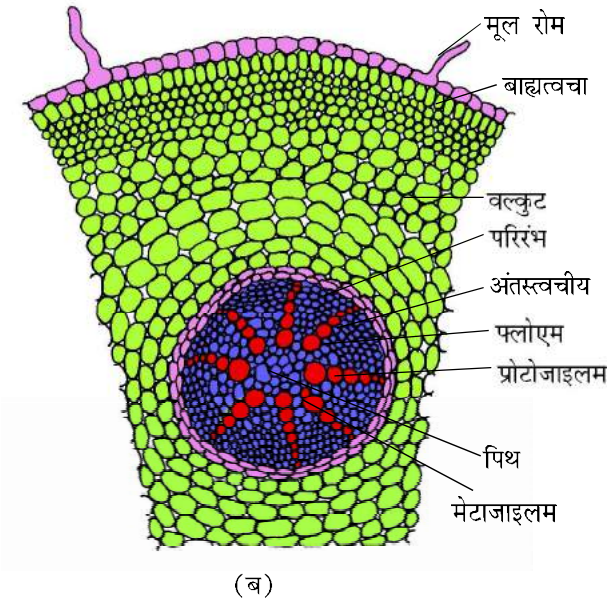

(ब)

चित्र 6.6 अनुप्रस्थकाट (अ) द्विबीजपत्री मूल (प्राथमिक) (ब) एकबीजपत्री मूल

कॉलेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ परतें होती हैं जो बाह्यत्वचा के नीचे होती हैं। ये शैशव तने को यांत्रिक सहारा देती हैं। वल्कुट सतहें अधस्त्वचा के नीचे होती हैं। इसमें गोलाकार पतली भित्ति वाले पैरेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ परतें होती हैं। उसमें सुस्पष्ट अंतरा कोशिकीय स्थान होता है। **अंतस्त्वचा** वल्कुट की सबसे भीतरी सतह होती है और इसमें नाल आकार की कोशिकाओं की एक सतह होती है। इन कोशिकाओं में स्टार्च प्रचुर मात्रा

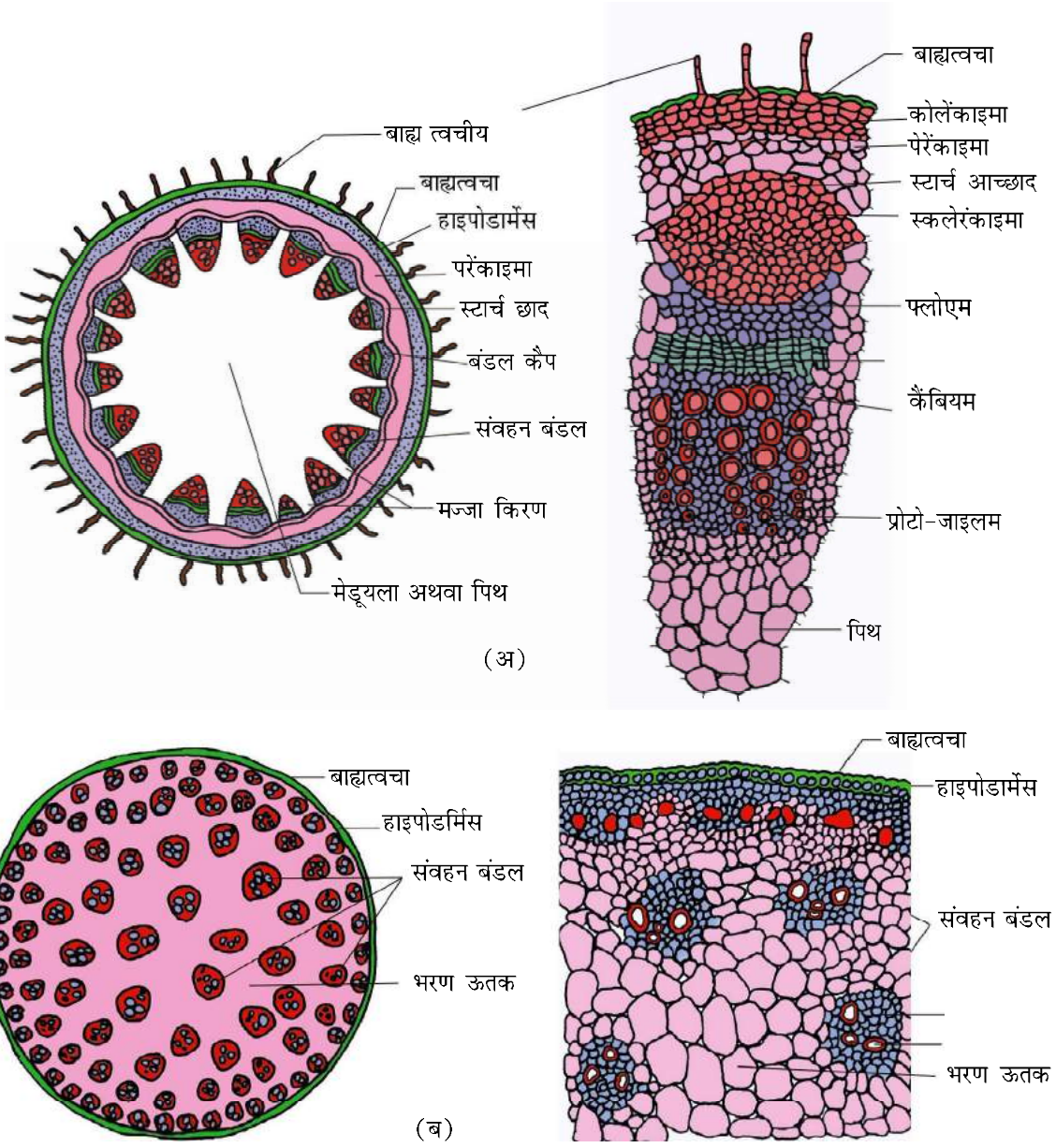

चित्र 6.7 तने की अनुप्रस्थ काट (अ) द्विबीजपत्री (ब) एकबीजपत्री

में होता है, इसलिए इसे **स्टार्च आच्छद** भी कहते हैं। परिरंभ अंतस्त्वचा के नीचे और फ्लोएम के ऊपर होती है। इसमें स्कलेंरकाइमा की कोशिकाएँ अर्द्धचंद्राकार समूह में होती है। संवहन बंडलों के बीच अरीय रूप में विन्यस्त पैरेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ सतहें होती हैं जो मज्जाकिरण बनाते हैं। बहुसंख्य **संवहन बंडल** एक छल्ले में होते हैं। संवहन बंडलों का छल्ले में बना होना द्विबीजपत्री तने का गुण है। प्रत्येक संवहन बंडल संयुक्त मध्यादिदारुक तथा खुले होते हैं। तने में **पिथ** केंद्र में होती हैं इसमें गोलाकार, पैरेंकाइमी कोशिकाएँ होती हैं। इन कोशिकाओं के बीच में अंतरा कोशिकीय स्थान होता है।

6.3.4 एकबीजपत्री तना

एकबीजपत्री तने की शारीरिक रचना द्विबीजपत्री तने से कुछ भिन्न है, लेकिन ऊतकों के विन्यस्त रहने के क्रम में कोई अंतर नहीं हैं। चित्र 6.7 अ में आप देखेंगे कि एकबीजपत्री तने की बाह्यत्वचा पर त्वचारोम नहीं होते। एकबीजपत्री तने में अधस्त्वचा स्कलेरंकाइमा कोशिकाओं की बनी होती है। वल्कुट में कई सतहें होती हैं, इसमें बहुत से बिखरे हुए संवहन बंडल होते हैं। इसके संवहन बंडल के चारों ओर स्कलेंकाइमी बंडल आच्छद होता है (चित्र 6.7 ब)। संवहन बंडल संयुक्त तथा बंद होते हैं। परिधीय संवहन बंडल प्राय: छोटे और केंद्र में बड़े होते हैं। संवहन बंडल में फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं होते और इसमें जल रखने वाली गुहिकाएँ होती हैं।

6.3.5 पृष्ठाधार (द्विबीजपत्री) पत्ती

पृष्ठाधर पत्ती के फलक की लंबवत् काट तीन प्रमुख भागों जैसे बाह्यत्वचा, पर्ण मध्योतक तथा संवहन तंत्र दिखाते हैं। **बाह्यत्वचा** जो ऊपरी सतह (अभ्यक्ष बाह्यत्वचा) तथा निचली सतह (अपाक्ष बाह्यत्वचा) को घेरे रहती हैं उस पर क्यूटीकल होती है। निचली बाह्यत्वचा पर ऊपरी सतह की अपेक्षा रंध्र बहुत अधिक संख्या में होते हैं। ऊपरी सतह पर रंध्र नहीं भी हो सकते हैं। ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा के बीच स्थित सभी ऊतकों को **पर्णमध्योतक** कहते हैं। पर्णमध्योतक जिसमें क्लोरोप्लास्ट होते हैं और प्रकाश संश्लेषण करते हैं, पैरेंकाइमा कोशिकाओं से बनते हैं। और इसमें दो प्रकार की कोशिकाएं होती है- **(i) खंभ पैरेंकाइमा** तथा **(ii) स्पंजी पैरेंकाइमा** है। खंभ पैरेंकाइमा ऊपरी बाह्यत्वचा के बिल्कुल नीचे होते हैं और इनकी कोशिकाएँ लंबी होती हैं। ये लंबवत समानांतर होती हैं। स्पंजी पैरेंकाइमा खंभ कोशिकाओं से नीचे होती हैं और निचली बाह्यत्वचा तक जाती है। इस क्षेत्र की कोशिकाएँ अंडाकर अथवा गोल होती हैं। इन कोशिकाओं के बीच बहुत खाली स्थान तथा वायु गुहिकाएँ होती हैं। **संवहन तंत्र** में संवहन बंडल होते हैं। इन बंडल शिराओं तथा मध्यशिरा संवहन बंडल का माप शिराओं के माप पर आधारित होता है। शिराओं की मोटाई द्विबीजपत्री पत्तियों की जालिका शिराविन्यास में भिन्न होती है। संवहन बंडल संयुक्त बहि:फ्लोएमी तथा मध्यादिदारुक होते हैं। प्रत्येक संवहन बंडल के चारों ओर मोटी भित्ति वाली कोशिकाओं की एक परत होती है जो सघन होती हैं। इसे **बंडल**

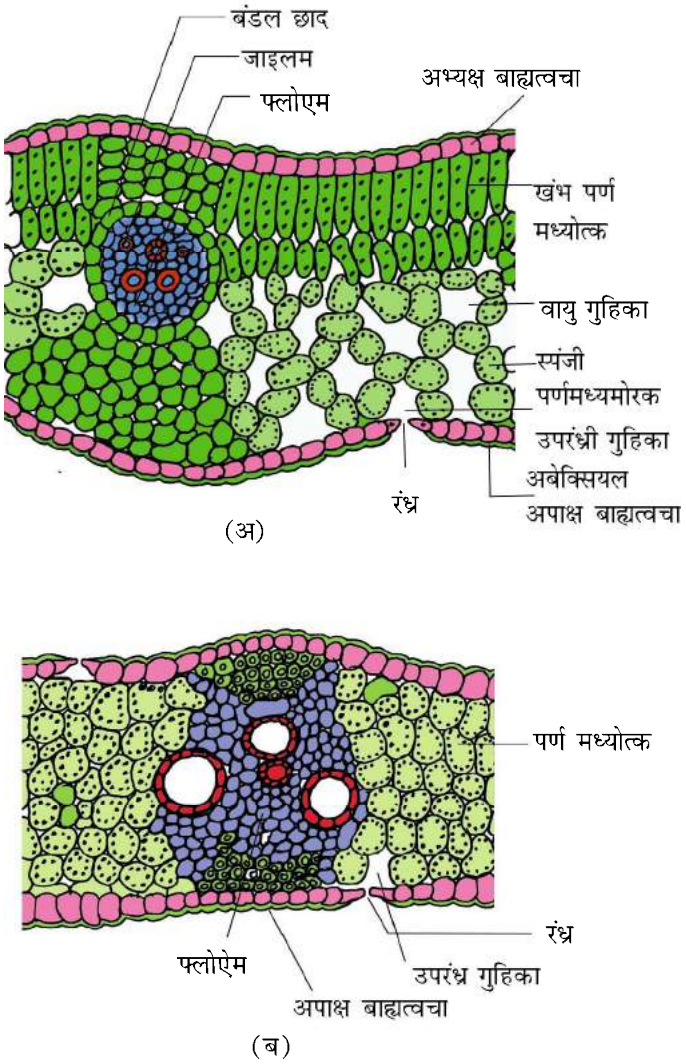

चित्र 6.8 पत्ती की अनुप्रस्थ काट (अ) द्विबीज (ब) एकबीजपत्री

आच्छद कहते हैं। चित्र 6.8 (अ) देखो और संवहन बंडल में जाइलम के स्थान को देखो।

6.3.6 समद्धि पार्श्व (एकबीजपत्री) पत्ती

एक समृद्धि पार्श्व पत्ती का शारीर तथा पृष्ठाधार पत्ती का शारीर अधिकांश समान ही है; लेकिन उनमें कुछ भिन्नता भी देख सकते हैं इसमें ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा पर एक समान क्यूटीकल होती है और उसमें दोनों सतह पर रंध्रों की संख्या लगभग समान होती है चित्र 6.8(ब)।

घास में ऊपरी बाह्यत्वचा कुछ कोशिकाएँ लंबी, खाली तथा रंगहीन होती हैं। इन कोशिकाओं को **आवर्ध त्वक्कोशिका** कहते हैं। जब कोशिकाएँ स्फीत होती हैं, तब ये कोशिकाएँ मुड़ी हुई पत्तियों को खुलने में सहायता करती हैं। वाष्पोत्सर्जन की अधिक दर होने पर ये पत्तियाँ वाष्पोत्सर्जन की दर कम करने के लिए मुड़ जाती हैं। एक बीजपत्री की पत्तियों में शिरा विन्यास समानांतर होता है इसका पता तब लगता है जब हम पत्ती की लंबवत काट देखते हैं जिसमें संवहन बंडल का माप भी एक समान होता है।

6.4 द्वितीयक वृद्धि

मूल तथा तना लंबाई में शीर्षस्थ विभज्या की सहायता से बढ़ते हैं। इसे प्राथमिक वृद्धि कहते हैं। अधिकांश द्विबीजपत्रियों में प्राथमिक वृद्धि के अतिरिक्त उनकी मोटाई भी बढ़ती है। इस वृद्धि को **द्वितीयक वृद्धि** कहते हैं। यह एकबीजपत्री मूल तथा तने में नहीं होता। जिम्नोस्पर्म के तने तथा मूल में भी द्वितीयक वृद्धि होती है। जो ऊतक द्वितीयक वृद्धि में भाग लेते हैं उन्हें **पार्श्वीय मेरिस्टेम, संवहन कैंबियम** तथा **कार्क कैंबियम** कहते हैं।

6.4.1 संवहन कैंबियम

मेरिस्टेमी सतह जो संवहन ऊतक-जाइलम तथा फ्लोएम को काटती है उसे संवहन कैंबियम कहते हैं। शैशव तने में यह जाइलम तथा फ्लोएम के बीच एकल सतह के रूप में खंडों में होती हैं। बाद में यह एक संपूर्ण छल्ले का रूप ले लेती है।

6.4.1.1 कैंबियमी छल्ले का बनना

द्विबीजपत्री तने में प्राथमिक जाइलम तथा प्राथमिक फ्लोएम के बीच में स्थित कैंबियम **अंत:पूलीय कैंबियम** हैं। मध्यांश किरणों की कोशिकाएँ जो अंत:पूलीय के समीप होती हैं। ये मेरिस्टेमी (विभज्य) हो जाती हैं और एक **अंतरापूलीय कैंबियम** बनाता हैं। इस प्रकार कैंबियम का एक अखंड छल्ला बन जाता है।

6.4.1.2 कैंबियम छल्ले की क्रिया

कैंबियम छल्ला सक्रिय हो जाता है और बाहर तथा भीतर दोनों ओर नई कोशिकाएँ बनाता है। जो कोशिकाएँ पिथ की ओर बनती हैं, वे परिपक्व होने पर **द्वितीयक जाइलम** बनाती हैं और जो बाहर (परिधि) की ओर होती हैं, वे **द्वितीयक फ्लोएम** बनाती हैं। कैंबियम प्राय: भीतर की ओर अधिक सक्रिय होता है जबकि बाहर की इतना सक्रिय नहीं होता। इसके परिणामस्वरुप द्वितीयक जाइलम अधिक बनता है तथा द्वितीयक फ्लोएम कम। द्वितीयक फ्लोएम शीघ्र ही एक सघन पिंड बन जाता है। अंतत: प्राथमिक तथा द्वितीयक फ्लोएम शनै-शनै: दब जाते हैं; क्योंकि द्वितीयक जाइलम अखंड रूप से बनते रहते हैं। प्राथमिक जाइलम केंद्र में अथवा केंद्र के आस-पास लगभग वैसे ही बने रहते हैं। कुछ स्थानों पर कैंबियम पैरेंकाइमा की एक संकरी पट्टी बनाते हैं। यह पट्टी द्वितीयक जाइलम तथा द्वितीयक फ्लोएम में होकर अरीय दिशाओं में जाती है। इंको **द्वितीयक मज्जाकिरण** कहते हैं (चित्र 6.9)।

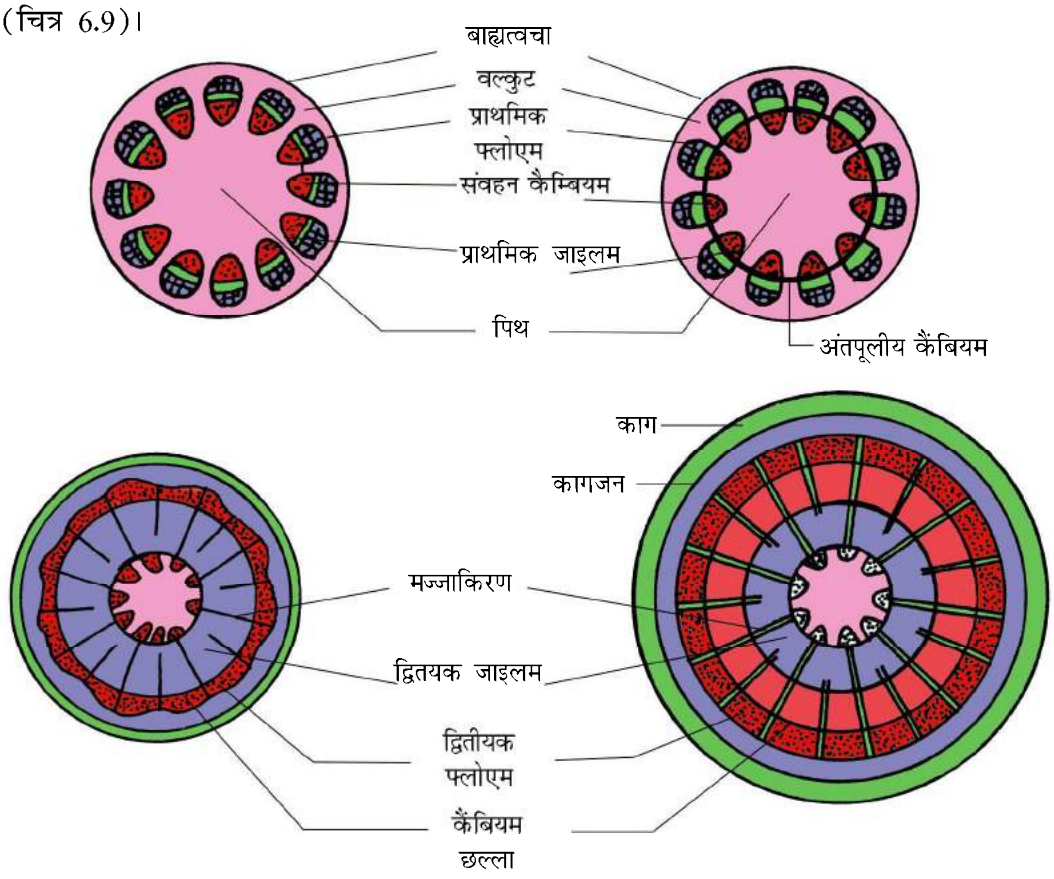

चित्र 6.9 अनुप्रस्थ काट में द्विबीजपत्री तने की द्वितीयक वृद्धि

6.4.1.3 बसंतदारु तथा शरद दारु

कैंबियम की क्रिया शरीरक्रियात्मक तथा पर्यावरणीय कारकों से नियंत्रित होती है। उष्णकटि बंधीय क्षेत्रों में, जलवायु समान नहीं रहती। बसंत के मौसम में कैंबियम बहुत सक्रिय होता है और अधिक संख्या में वाहिकाएँ बनाता है जिसकी गुहिका चौड़ी होती है। बसंत के मौसम में बनने वाली काष्ठ को **बसंतदारु** अथवा **अग्रदारु** कहते हैं। सर्दियों में कैंबियम कुछ कम सक्रिय होता है और संकरी वाहिकाएँ बनाता है। इस काष्ठ को **शरददारु** अथवा **पश्चदारु** कहते हैं।

बसंत का रंग हल्का होता है और उसका घनत्व भी कम होता है। शरददारु गहरे रंग की होती है और उसका घनत्व भी अधिक होता हैं। दो प्रकार के काष्ठ एकांतर संकेंद्र वलय के रूप में होते हैं जिन्हें **वार्षिक वलय** कहते हैं आप इन वार्षिक वलयों को गिन कर वृक्ष की आयु का अनुमान लगा सकते हैं।

6.4.1.4 अंत:काष्ठ तथा सरदारु

लंबी आयु वाले वृक्षों में द्वितीयक जाइलम का अधिकांश भाग विशेषत: तने का केंद्रीय भाग अथवा सबसे भीतरी भाग काले भूरे रंग का हो जाता है। और इसे अंत काष्ठ अथवा कठोरदारु कहते हैं। अंत:काष्ठ में बहुत से कार्बनिक यौगिक जैसे टेनिन, रेजिन, तेल, गोंद, खुशबूदार पदार्थ तथा आवश्यक तेल होते हैं। ये पदार्थ अंत:काष्ठ को कठोर, चिरस्थायी बनाते हैं और लकड़ी को सूक्ष्म जीवियों तथा कीड़ों से भी बचाते हैं। इस क्षेत्र में मृत तत्व होते हैं जिनकी भित्ति बहुत ही लिग्निनी होती है। इसे **हृददारु** कहते हैं। अंत:काष्ठ पानी का संवहन नहीं करता। यह केवल तने को यांत्रिक सहारा देता है। द्वितीयक जाइलम की परिधि क्षेत्र को **रसदारु** कहते हैं, जो हल्के रंग का होता है और जिसमें सजीव पैरेंकाइमा कोशिकाएँ होती हैं। यह मूल से पानी तथा खनिज लवण को पत्तियों तक पहुंचाता हैं।

6.4.2 कार्क कैंबियम

जैसे-जैसे तने की परिधि में वृद्धि होती जाती है त्यों-त्यों बाहरी वल्कुट तथा बाह्यत्वचा की सतहें टूटती जाती है और उन्हें नई संरक्षी कोशिका सतह की आवश्यकता होती है। इसलिए एक दूसरे मेरिस्टेमी ऊतक तैयार हो जाता है जिसे **कार्क कैंबियम** अथवा **कागजन** कहते हैं। यह प्राय: वल्कुट क्षेत्र में विकसित होता है।

यह कुछ सतही मोटी और संकरी पतली भित्ति वाली आयाताकार कोशिकाओं के बनी हाती हैं। कागजन दोनों ओर कोशिकाओं को बनाता है। बाहर की ओर की कोशिकाएँ **कार्क** अथवा **काग** में बँट जाती हैं और अंदर की ओर की कोशिकाएँ **द्वितीयक वल्कुट** अथवा कागअस्तर में विभेदित हो जाती है। कार्क में पानी प्रवेश नहीं कर सकता; क्योंकि इसकी कोशिका भित्ति पर सूबेरिन जमा रहता है। द्वितीयक वल्कुट की कोशिकाएँ पैरेंकाइमी होती हैं। कागजन, काग तथा काग मिलकर **परिचर्म** बनाते हैं। कार्क कैंबियम की क्रियाशीलता के कारण वल्कुट की बाहरी परत तथा बाह्यत्वचा पर दबाव पड़ता है

और अंततः ये परतें मृत हो जाती हैं और उतर जाती हैं क्रियाशील कार्क कैंबियम के बाहर जितनी भी मृत कोशिकाएँ हैं, वे **छालवल्क** बनाते हैं।

छालवल्क एक गैर तकनीकी शब्द है जो वाहिका कैंबियम से बाहर तक के ऊतकों को संदर्भित करता है। अतः इसमें द्वितीयक फ्लोएम भी शामिल है। मौसम के शुरुआत में जो छाल बनती है उसे **प्रारंभी** या **कोमल** छाल कहते हैं और मौसम के अंत में बनने वाली छाल को **पश्च** या **कठोर** छाल कहते हैं। *छालवल्क की रचना में विभिन्न प्रकार की सम्मिलित कोशिकाओं के नाम लिखें।*

कुछ क्षेत्रों में कागजन कार्क कोशिकाओं की बजाय बाहर की ओर पैरेंकाइमी कोशिकाएँ बनाता है। ये पैरेंकाइमी कोशिकाएँ बाह्यत्वचा पर फट जाती हैं और लेंस के आकार के छिद्र बनाती है जिसे **वातरंध्र** कहते हैं। ये बाहरी वायुमंडल तथा तने की भीतरी ऊतकों के बीच गैसों का आदान-प्रदान करते हैं। ये अधिकांश काष्ठीय वृक्षों में पाए जाते हैं (चित्र 6.10)।

6.4.3 मूल में द्वितीयक वृद्धि

द्विबीजपत्री मूल में संवहन कैंबियम का उद्भव पूर्णतः द्वितीयक है। यह फ्लोएम बंडल के तुरंत नीचे, परिरंभ ऊतक के कुछ भाग, प्रोटोजाइलम के ऊपर स्थित ऊतकों से उत्पन्न होता है और एक अखंड लहरदार छल्ला बनाता है। यह बाद में वृत्ताकार बन जाता है (चित्र 6.11)। इसके आगे की घटनाएँ द्विबीजपत्री तने की तरह ही होती है, जो ऊपर बताई जा चुकी हैं। जिम्नोस्पर्म की मूल तथा तने में भी द्वितीयक वृद्धि होती हैं। एकबीजपत्री पौधों में द्वितीयक वृद्धि नहीं होती।

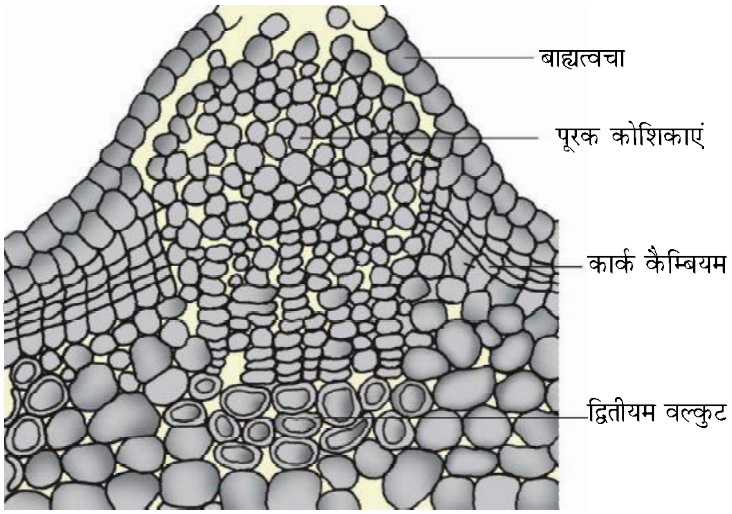

(अ)

(ब)

चित्र 6.10 (अ) वातरंध्र तथा (ब) छाल वल्क

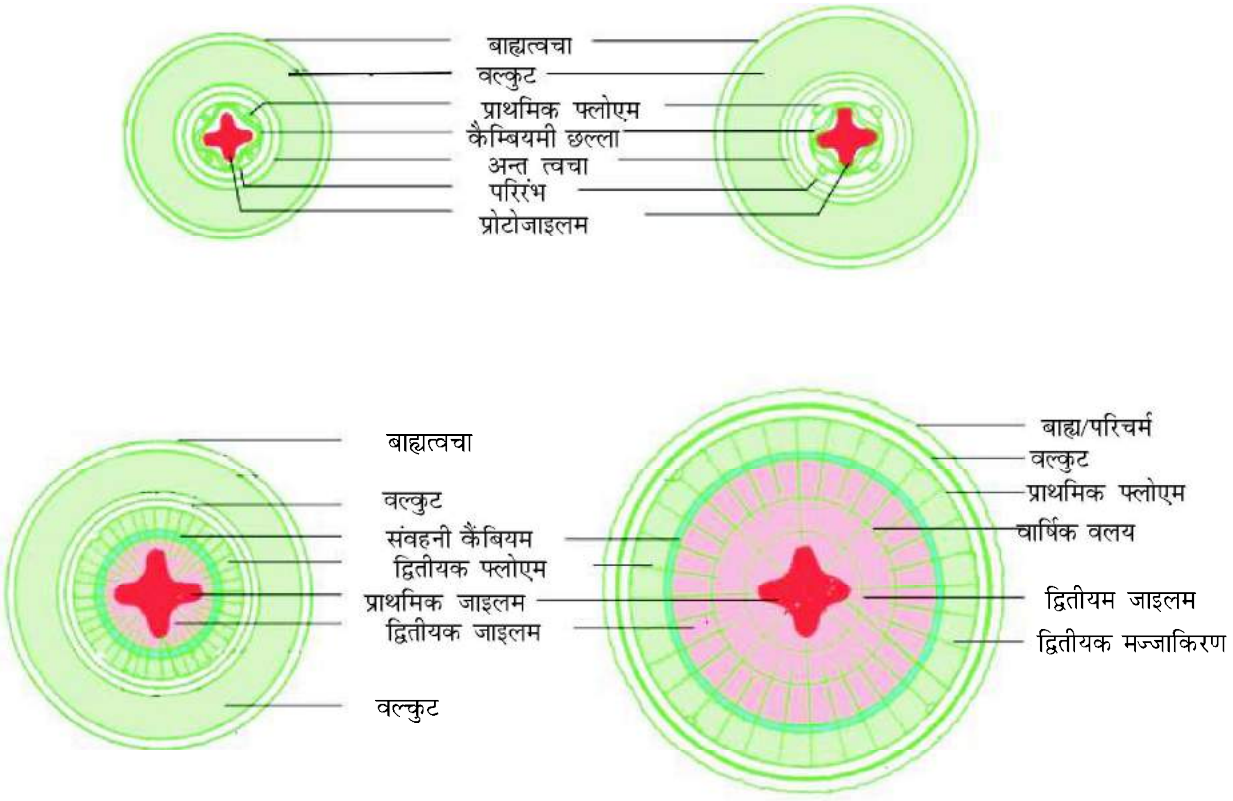

चित्र 6.11 एक प्रारूपी द्विबीज मूल में पाई जाने वाली द्वितीयक वृद्धि की विभिन्न अवस्थाएं

सारांश

शारीरिकी दृष्टि से पौधा विभिन्न प्रकार के ऊतकों से बना है। ऊतक मुख्यत: मेरिस्टेमेटिक (शीर्ष, पार्श्वीय तथा अंतर्वेशी) तथा स्थायी (सरल तथा जटिल) में विभक्त होते हैं। ऊतक अनेकों कार्य करते हैं जैसे स्वांगीकरण, यांत्रिक सहारा, संचय तथा पानी, खनिज लवण तथा प्रकाशसंश्लेषी जैसे पदार्थों का संवहन। बाह्य त्वचीय तंत्र में बाह्य त्वचीय कोशिकाएँ, रंध्र तथा बाह्य त्वचीय उपांग होते हैं। तीन प्रकार के ऊतक तंत्र होते हैं- जैसे बाह्य त्वचीय, भरण तथा संवहन। भरण ऊतक तंत्र के तीन क्षेत्र होते हैं- वल्कुट (कॉर्टेक्स), परिरंभ तथा पिथ। संवहन ऊतक तंत्र में जाइलम तथा फ्लोएम होता है। जाइलम तथा फ्लोएम की स्थिति के अनुसार संवहन बंडल विभिन्न प्रकार के होते हैं।

संवहन बंडल संवहन रचना बनाते हैं और पानी, खनिज तथा खाद्य पदार्थों का स्थानांतरण करते हैं। द्विबीजपत्री तथा एक बीजपत्री पौधों की आंतरिक रचना में बहुत अंतर होता है। ये प्रकार, संख्या तथा संवहन बंडल की स्थिति के आधार पर अलग-अलग होते हैं। द्वितीयक वृद्धि द्विबीजपत्री पौधों के तने तथा मूल में होती है। इससे इंका व्यास बढ़ जाता है। काष्ठ वास्तव में द्वितीयक जाइलम है उनके संघटक तथा समय उत्पादन के अनुसार काष्ठ विभिन्न प्रकार के होते हैं।

अभ्यास

1. विभिन्न प्रकार के मेरिस्टेम की स्थिति तथा कार्य बताओ।
2. कार्क कैंबियम ऊतकों से बनाता है जो कार्क बनाते हैं। क्या आप इस कथन से सहमत हैं? वर्णन करो।
3. चित्रों की सहायता से काष्ठीय एंजियोस्पर्म के तने में द्वितीयक वृद्धि के प्रक्रम का वर्णन करो। इसकी क्या सार्थकता है?
4. निम्नलिखित में विभेद करो
   (अ) ट्रेकीड तथा वाहिका
   (ब) पैरेंकाइमा तथा कॉलेंकाइमा
   (स) रसदारु तथा अंत:काष्ठ
   (द) खुला तथा बंद संवहन बंडल
5. निम्नलिखित में शारीर के आधार पर अंतर करो
   (अ) एकबीजपत्री मूल तथा द्विबीजपत्री मूल
   (ब) एकबीजपत्री तना तथा द्विबीजपत्री तना
6. आप एक शैशव तने की अनुप्रस्थ काट का सूक्ष्मदर्शी से अवलोकन करें। आप कैसे पता करेंगे कि यह एकबीजपत्री तना अथवा द्विबीजपत्री तना है? इसके कारण बताओ।
7. सूक्ष्मदर्शी किसी पौधे के भाग की अनुप्रस्थ काट निम्नलिखित शारीर रचनाएँ दिखाती है।
   (अ) संवहन बंडल संयुक्त, फैले हुए तथा उसके चारों ओर स्क्लेरेंकाइमी आच्छद हैं
   (ब) फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं है।
   आप कैसे पहचानोगे कि यह किसका है?
8. जाइलम तथा फ्लोएम को जटिल ऊतक क्यों कहते हैं?
9. रंध्रीतंत्र क्या है? रंध्र की रचना का वर्णन करो और इसका चिह्नित चित्र बनाओ।
10. पुष्पी पादपों में तीन मूलभूत ऊतक तंत्र बताओ। प्रत्येक तंत्र के ऊतक बताओ।
11. पादप शारीर का अध्ययन हमारे लिए कैसे उपयोगी है?
12. परिचर्म क्या है? द्विबीजपत्री तने में परिचर्म कैसे बनता है?
13. पृष्ठाधर पत्ती की भीतरी रचना का वर्णन चिह्नित चित्रों की सहायता से करो।
14. त्वक कोशिकाओं की रचना तथा स्थिति उन्हें किस प्रकार विशिष्ट कार्य करने में सहायता करती है?

अध्याय 7

प्राणियों में संरचनात्मक संगठन

7.1 *प्राणी ऊतक*
7.2 *अंग एवं अंग तंत्र*
7.3 *केंचुआ*
7.4 *कॉकरोच*
7.5 *मेंढक*

आपने पिछले अध्याय में प्राणि जगत के अनेक एक कोशिकीय (unicellular) व बहुकोशिकीय (multicellular) जीवों का अध्ययन किया। एक कोशिकीय प्राणियों में जीवन की समस्त जैविक क्रियाएं जैसे- पाचन, श्वसन तथा जनन, एक ही कोशिका द्वारा संपन्न होती हैं। बहुकोशकीय प्राणियों के जटिल शरीर में उपर्युक्त आधारभूत क्रियाएं भिन्न-भिन्न कोशिका समूहों द्वारा व्यवस्थित रूप से संपन्न की जाती हैं। सरल प्राणी हाइड्रा का शरीर विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं का बना हुआ है, जिनमें प्रत्येक कोशिका की संख्या हजारों में होती है। मानव का शरीर अरबों कोशिकाओं का बना हुआ है, जो विविध कार्य संपन्न करता है। ये कोशिकाएं शरीर में एक साथ कैसे काम करती हैं? बहुकोशिकीय प्राणियों में समान कोशिकाओं का समूह, अंतरकोशिकीय पदार्थों सहित एक विशेष कार्य करता है, कोशिकाओं का ऐसा संगठन **ऊतक** (tissue) कहलाता है।

आपको आश्चर्य हो सकता है कि सभी जटिल प्राणियों का शरीर केवल चार प्रकार के आधारभूत ऊतकों का बना हुआ है। ये सब ऊतक एक विशेष अनुपात एवं प्रतिरूप से संगठित होकर अंगों का निर्माण करते हैं, जैसे- आमाशय, फुप्फुस (lungs), हृदय और वृक्क (kidney)। जब दो या दो से अधिक अंग अपनी भौतिक एवं रासायनिक पारस्परिक-क्रिया से एक निश्चित कार्य को संपन्न कर अंग-तंत्र का निर्माण करते हैं जैसे-पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र इत्यादि। समस्त शरीर की जैविक क्रियाएं, कोशिका, ऊतक, अंग तथा अंग तंत्र में श्रम विभाजन के द्वारा संपन्न होती हैं और पूरे शरीर को जीवित रखने के लिए योगदान देती हैं।

7.1 प्राणि ऊतक

कोशिका की संरचना उसके कार्य के अनुसार बदलती रहती है। इस प्रकार ऊतक भिन्न-भिन्न होते हैं और उन्हें मोटे तौर पर निम्नलिखित से चार प्रकारों में वर्गीकृत किया

गया है- (1) उपकला ऊतक (2) संयोजी ऊतक (3) पेशी ऊतक (4) तंत्रिका ऊतक

7.1.1 उपकला ऊतक

हम उपकला ऊतक को सामान्यत: उपकला ही कहते हैं। इस ऊतक में एक मुक्त स्तर होता है जो एक ओर तो देह-तरल (body fluid) और दूसरी ओर बाह्य वातावरण के संपर्क में रहता है और इस प्रकार देह का आवरण अथवा आस्तर (lining) का निर्माण करता है। कोशिकाएं अंतराकोशिकीय आधात्री (intercellular matrix) द्वारा दृढतापूर्वक जुड़ी रहती हैं। उपकला ऊतक दो प्रकार के होते हैं - 1. **सरल उपकला** तथा **संयुक्त उपकला।** सरल उपकला एक ही स्तर का बना होता है तथा यह देहगुहाओं, वाहिनियों, और नलिका का आस्तर है। संयुक्त उपकला कोशिकाओं की दो या दो से अधिक स्तरों की बनी होती है और इसका कार्य रक्षात्मक है जैसे कि हमारी त्वचा। कोशिका के सरंचनात्मक रूपांतरण के आधार पर सरल उपकला ऊतक तीन प्रकार के हैं-

शल्की (squamous) उपकला, घनाकार (cuboid) उपकला तथा स्तंभाकार (columnar) (चित्र 7.1)

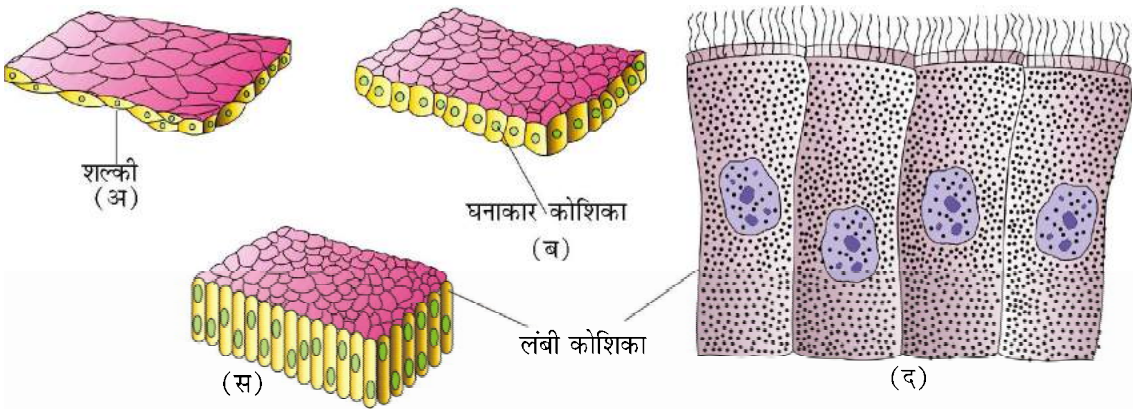

चित्र 7.1 सरल उपकला (अ) शल्की (ब) घनाकार (स) स्तंभाकार (द) पक्ष्माभ धारी स्तंभाकार कोशिकाएं

शल्की उपकला ऊतक यह एक चपटी कोशिकाओं के पतले स्तर से बनता है जिसके किनारे अनियमित होते हैं। यह ऊतक रक्त वाहिकाओं की भित्ति में तथा फेफड़े के वायु कोश (air sac) में पाया जाता है और यह विसरण सीमा का कार्य करती है। **घनाकार उपकला** यह ऊतक एक स्तरीय घन जैसी कोशिकाओं से बना होता है। यह सामान्यत: वृक्कों के वृक्कक (nephrons) के नलिकाकार भागों तथा ग्रंथियों की वाहिनियों में पाया जाता है। इनका मुख्य कार्य स्रवण और अवशोषण है। वृक्क में वृक्ककों की समीपस्थ वलयित (concoluted) सूक्ष्म नलिका की उपकला में सूक्ष्मांकुर (microvilli) होते हैं। **स्तंभाकर उपकला** लंबी एवं पतली कोशिकाओं के एक स्तर का बना होता है। केंद्रक प्राय: कोशिका के आधारी भाग में होता है। मुक्त सतह पर प्राय: सूक्ष्मांकुर पाए जाते हैं। सूक्ष्मांकुर आमाशय, आंत्र तथा आंतरिक आस्तर में पाए जाते हैं और यह स्रवण ओर अवशोषण में सहायक देते हैं। यदि इन स्तंभाकार या घनाकार कोशिकाओं की मुक्त सतह पर पक्ष्माभ होते हैं तो इसे **पक्ष्माभी** (ciliated) **उपकला** (चित्र 7.1घ) कहते हैं। इनका कार्य कणों अथवा श्लेष्मा को उपकला की सतह पर एक निश्चित दिशा में ले जाना है। यह मुख्यत: श्वसनिका (broncheol) तथा डिंबवाहिनी

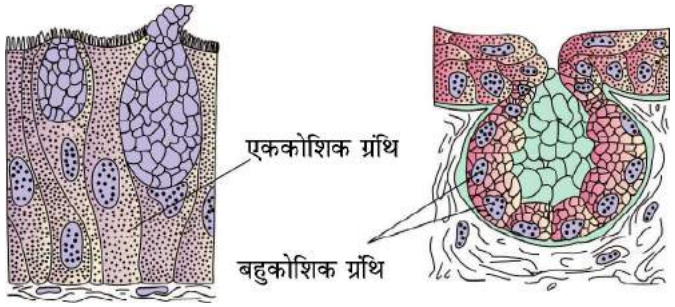

चित्र 7.2 ग्रंथिल उपकला (अ) एककोशिक (ब) बहुकोशिक

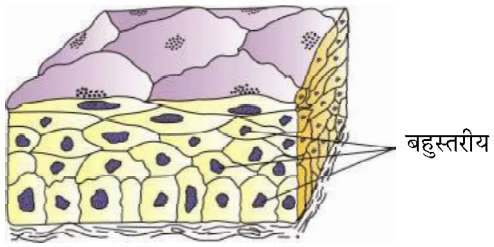

चित्र 7.3 संयुक्त उपकला

नलिकाओं (fallopiam tubes) जैसे खोखले अंगों की भीतरी सतह में पाए जाते है।

कुछ स्तंभाकार या घनाकार कोशिकाओं में स्रवण की विशेषता होती है और ऐसी उपकला को **उपकला ग्रंथिल** (glandular epithrlium) कहते हैं (चित्र 7.2)। इसे दो समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है- एक कोशिक जो पृथक ग्रंथिल कोशिकाओं का बना होता है, जैसे आहार नाल की कलश कोशिका (goblet cell) तथा बहुकोशिक जो कोशिकाओं के पुंज (उदाहरण -लार ग्रंथि) का बना होता है। स्रावी कोशिका में स्राव के निष्कासन के आधार पर ग्रंथियों को दो भागों में विभाजित किया जाता है, जिन्हें **बहि:स्रावी** (eocrine) ग्रंथि तथा **अंत: स्रावी ग्रंथि** (endocrine) कहते हैं। बहि:स्रावी ग्रंथि से श्लेष्मा, लार, कर्ण मोम (earwax) तेल, दुग्ध, आमाशय एंजाइम तथा अन्य कोशिका उत्पाद स्रावित होते हैं। ये सब वाहिनियों अथवा नलिकाओं के माध्यम से निर्मुक्त होते हैं। इसके विपरीत अंत:स्रावी ग्रंथियों में नलिकाएं नहीं होती हैं। इसके उत्पाद हार्मोन हैं जो सीधे उस तरल में छोड़े जाते हैं, जिसमें ग्रंथि स्थित होती है।

संयुक्त उपकला एक से ज्यादा कोशिका स्तरों (बहु-स्तरित) की बनी होती है और इस प्रकार स्रवण और अवशोषण में इसकी भूमिका सीमित है (चित्र 7.3)। इसका मुख्य कार्य रासायनिक व यांत्रिक प्रतिबलों (stresses) से रक्षा करना है। यह त्वचा की शुष्क सतह, मुख गुहा की नम सतह पर, ग्रसनी, लार ग्रंथियों और अग्नाशयी की वाहिनियों के भीतरी आस्तर को ढकता है।

उपकला की सभी कोशिकाएं एक दूसरे से अंतरकोशिकीय पदार्थों से जुड़ी रहती हैं। लगभग सभी प्राणि ऊतकों में कोशिकाओं के विशेष जोड़ व्यक्तिगत (individual) कोशिकाओं को संरचनात्मक एवं कार्यात्मक संधि प्रदान करते हैं। उपकला और अन्य ऊतकों में तीन प्रकार की संधि (junctions) पाई जाती हैं। ये हैं-दृढ़, आंसजी एवं अंतराली संधि। **दृढ़ संधि** पदार्थों को ऊतक से बाहर निकलने से रोकती है। **आंसजी संधियों** पड़ोसी कोशिकाओं के कोशिका द्रव्य को एक दूसरे से जोड़ने का काम करती हैं। **अंतराली संधियों** आयनों तथा छोटे अणुओं एवं कभी-कभी बड़े अणुओं के तुरंत स्थांतरित करने में सहायता करती हैं। वे ऐसा संलग्न कोशिकाओं के कोशिकाद्रव को आपस में जोड़कर करती हैं।

7.1.2 संयोजी ऊतक

जटिल प्राणियों के शरीर में संयोजी ऊतक बहुतायत एवं विस्तृत रूप से फैला हुआ पाया जाता है। संयोजी ऊतक नाम शरीर के अन्य ऊतकों एवं अंग को एक दूसरे से जोड़ने तथा

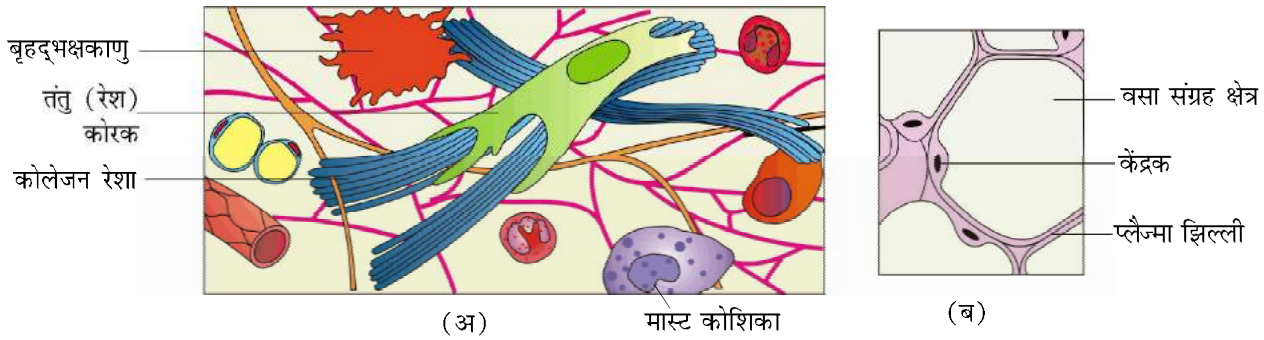

चित्र 7.4 ढीला संयोजी ऊतक (अ) ऐरियोलर ऊतक (ब) वसा ऊतक

आलंबन के आधार पर दिया गया है। संयोजी ऊतक में कोमल ऊतक से लेकर विशेष प्रकार के ऊतक जैसे- उपास्थि, अस्थि, वसीय ऊतक तथा रक्त सम्मिलित हैं। रक्त को छोड़कर सभी संयोजी ऊतकों में कोशिका संरचनात्मक प्रोटीन का तंतु स्रावित करती हैं, जिसे **कोलेजन** या **इलास्टिन** कहते हैं। ये ऊतक को शक्ति, प्रत्यास्थता एवं लचीलापन प्रदान करते हैं। ये कोशिका रूपांतरित पॉलिसेकेराइड भी स्रावित करती है, जो कोशिका और तंतु के बीच में जमा होकर आधात्री का कार्य करता है। संयोजी ऊतक को तीन प्रकारों में विभक्त किया गया है (i) **लचीले संयोजी ऊतक,** (ii) **सघन संयोजी ऊतक** एवं (iii) **विशिष्टकृत संयोजी ऊतक**।

शिथिल संयोजी ऊतक में कोशिका एवं तंतु एक दूसरे से अर्धतरल आधारीय पदार्थ में शिथिलता से जुड़े रहते हैं, उदाहरण-**त्वचा गर्तिका ऊतक** जो त्वचा के नीचे पाया जाता है (चित्र 7.4)। यह प्रायः उपकला के लिए आधारीय ढाँचे का कार्य करता है। इस संयोजी ऊतक में प्रायः तंतु कोरक (जो तंतु को जन्म देता है), महाभक्षकाणु एवं मास्ट कोशिकाएं होती हैं। **वसा ऊतक** दूसरा शिथिल संयोजी ऊतक है जो मुख्यतया त्वचा के नीचे स्थिति होता है। इस ऊतक की कोशिकाएं वसा संग्रहण के लिए विशिष्ट होती हैं। भोजन के जो पदार्थ प्रयोग में नहीं आते, वे वसा के रूप में परिवर्तित कर इस ऊतक में संग्रहित कर लिए जाते हैं।

सघन संयोजी ऊतकों में तंतु एवं तंतु कोशिकाएं दृढ़ता से व्यवस्थित रहती हैं। अभिविन्यास के आधार पर तंतु तथा तंतुकोरक **सघन संयोजी ऊतक** को **नियमित संयोजी ऊतक** तथा **अनियमित संयोजी ऊतक** में विभाजित किया गया है। सघन नियमित ऊतक में तंतु कोरक समानांतर तंतु के गुच्छों के बीच में कतार में उपस्थित होते हैं। कंडराएं जो कंकाल पेशी को अस्थि से जोड़ती हैं तथा स्नायु, जो एक अस्थि को दूसरी अस्थि से जोड़ती हैं इसका उदाहरण है। कोलैजन तंतु का गुच्छा कंडराओं को प्रतिरोधी क्षमता प्रदान करता है

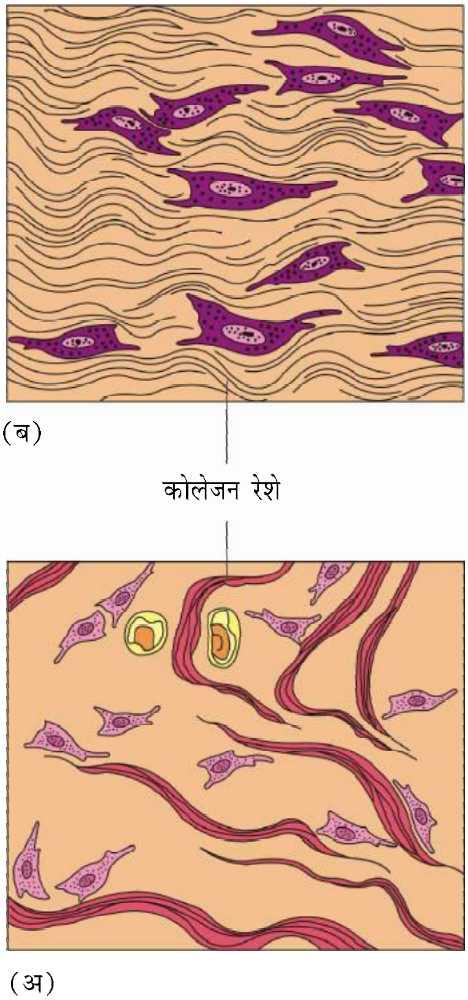

चित्र 7.5 घना संयोजी ऊतक (अ) घना नियमित (ब) घना अनियमित

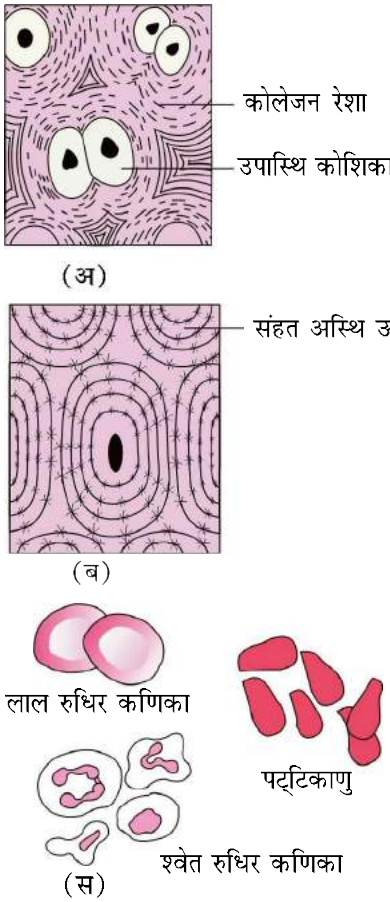

चित्र 7.6 विशिष्टीकृत संयोजी ऊतक

और इसे टूटने से बचाता है। सघन नियमित संयोजी ऊतक लचीली स्नायु (ligament) में पाया जाता है। सघन अनियमित ऊतक में तंतु तथा तंतुकोरक होते हैं (तंतु में अधिकांश कोलेजन होता है) (चित्र 7.5) जिनका अभिविन्यास अलग होता है। यह ऊतक त्वचा में पाया जाता है। उपास्थि, अस्थि एवं रक्त **विशेष प्रकार के संयोजी ऊतक** हैं।

उपास्थि का अंतराकोशिक पदार्थ ठोस, विशिष्ट आनम्य एवं संपीडन रोधी होता है। इस ऊतक को बनाने वाली कोशिकाएं (उपास्थि अणु) स्वयं द्वारा स्रावित आधात्री में छोटी छोटी गुहिकाओं में बंद हो जाती है। (चित्र 7.6 अ)। कशेरुकी भ्रूण में विद्यमान अधिकांश उपास्थियां, वयस्क अवस्था में अस्थि द्वारा प्रतिस्थापित हो जाती हैं। वयस्क में कुछ उपास्थि नाक की नोंक, बाह्य कान संधियों, मेरुदंड की आस पास की अस्थियों के मध्य तथा पैर और हाथ में पाई जाती है।

अस्थि खनिज युक्त ठोस संयोजी ऊतक है, इसका आनम्य आधात्री कॉलेजन तंतु एवं कैल्सियम लवण युक्त होता है जो अस्थि को मजबूती प्रदान करता है (चित्र 7.6 ब)। यह शरीर का मुख्य ऊतक है जो कि शरीर के कोमल अंगों का संरचनात्मक ढाँचा बनाता है तथा ऊतकों को सहारा एवं सुरक्षा देता है। अस्थि कोशिकाएं आधात्री के अंदर रिक्तिकाओं में उपस्थित रहती हैं। पैर की अस्थि जैसे आपकी लंबी अस्थि भार वहन का कार्य करती है। अस्थि कंकाल पेशी से जुड़कर परस्पर क्रिया द्वारा गति प्रदान करती है। कुछ अस्थियों में अस्थि मज्जा, रक्त कोशिकाओं का उत्पादन करती है।

रक्त तरल: संयोजी ऊतक होता है जिसमें जीवद्रव्य, लाल रुधिर कणिकाएं, सफेद रुधिर कणिकाएं और पट्टिकाणु (platlets) पाए जाते हैं (चित्र 7.6 स) रक्त मुख्य परिसंचारी तरल है जो कि विभिन्न पदार्थों के परिवहन में सहायता करता है। इसके बारे में आप विस्तृत रूप से अध्याय 17 और 18 में पढ़ेंगे।

7.1.3 पेशी ऊतक

पेशी ऊतक अनेक लंबे, बेलनाकार तंतुओं (रेशों) से बना होता है जो समानांतर-पंक्ति में सजे रहते हैं। यह तंतु कई सूक्ष्म तंतुकों से बना होता है जिसे **पेशी तंतुक** (myofibril) कहते हैं। समस्त पेशी तंतु समन्वित रूप से उद्दीपन के कारण संकुचित हो जाते हैं तथा पुन: लंबा होकर अपनी असंकुचित अवस्था में आ जाते हैं। पेशीय ऊतक की क्रिया से शरीर वातावरण में होने वाले परिवर्तनों के अनुसार गति करता है तथा शरीर के विभिन्न अंगों की स्थिति को संभाले रखता है। सामान्यतया शरीर की सभी गतियों में पेशियां प्रमुख भूमिका निभाती हैं। पेशीय ऊतक तीन प्रकार के होते हैं- (1) कंकाल पेशी (2) चिकनी पेशी (3) हृदय पेशी

कंकाल पेशी मुख्य रूप से कंकाली अस्थि से जुड़ी रहती है। प्रारूप (typical) पेशी जैसे द्विशिरस्का (biceps) (दो सिर वाली) पेशी में रेखीय कंकाल पेशी तंतु एक

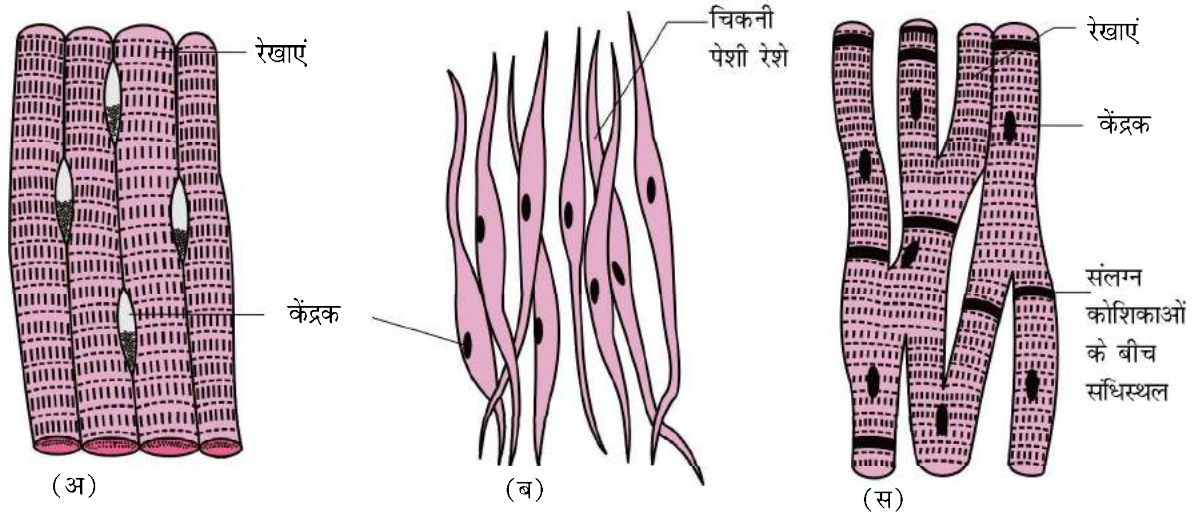

चित्र 7.7 पेशी ऊतक (अ) कंकालीय (रेखित) पेशी ऊतक (ब) चिकनी पेशी ऊतक (स) हृद-पेशी ऊतक

समूह में एक साथ समानांतर रूप में पाए जाते हैं। पेशी ऊतक के समूह के चारों ओर कठोर संयोजी ऊतक का आवरण होता है। (चित्र 7.7 अ) (इसके बारे में आप अध्याय 20 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

चिकनी पेशी-चिकनी पेशीय ऊतक की संकुचनशील कोशिका के दोनों किनारे पतले होते हैं तथा इनमें रेखा या धारियाँ नहीं होती हैं (चित्र 7.7 ब)। कोशिका संधियां उन्हें एक साथ बाँधें रखती हैं तथा ये संयोजी ऊतक के आवरण से ढके समूह रहते हैं। आंतरिक अंगों जैसे- रक्त नलिका, अग्नाशय तथा आँत की भित्ति में इस प्रकार का पेशी ऊतक पाया जाता है। चिकनी पेशी का संकुचन "अनैच्छिक" होता है; क्योंकि इनकी क्रियाविधि पर सीधा नियंत्रण नहीं होता है। जैसा कि हम कंकाल पेशियों के बारे में कर सकते हैं, चिकनी पेशी को मात्र सोचने भर से हम संकुचित नहीं कर सकते हैं।

हृदय पेशी- संकुचनशील ऊतक है जो केवल हृदय में ही पाई जाती है। हृदय पेशी की कोशिकाएं कोशिका संधियों द्वारा द्रव्य कला से एकरूप होकर चिपकी रहती हैं (चित्र 7.7 स)। संचार संधियों अथवा अंतर्विष्ट डिस्क (intercalated disc) के कुछ संगलन बिंदुओं पर कोशिका एक इकाई रूप में संकुचित होती है। जैसे कि जब एक कोशिका संकुचन के लिए संकेत ग्रहण करती है तब दूसरी पास की कोशिका भी संकुचन के लिए उद्दीपित होती है।

7.1.4 तंत्रिका ऊतक

तंत्रिका ऊतक मुख्य रूप से परिवर्तित अवस्थाओं के प्रति शरीर की अनुक्रियाशीला (responsiveness) के नियंत्रण के लिए उत्तरदायी होता है। तंत्रिका कोशिकाएं उत्तेजनशील कोशिकाएं हैं, जो

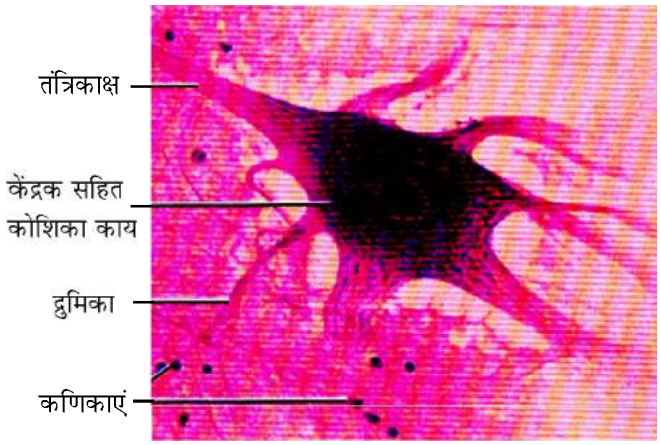

चित्र 7.8 तंत्रिकी-ऊतक (तंत्रिकोशिका)

तंत्रिका तंत्र की संचार इकाई है (चित्र 7.8)। तंत्रिबंध (Neuroglial) कोशिका बाकी तंत्रिका तंत्र को संरचना प्रदान करती है तथा तंत्रिका कोशिकाओं को सहारा तथा सुरक्षा देती है। हमारे शरीर में तंत्रिबध कोशिकाएं तंत्रिका ऊतक का आयतन के अनुसार आधा से ज्यादा हिस्से बनाता है।

जब एक तंत्रिका कोशिका को उपयुक्त रूप से उद्दीपित किया जाता है या वह स्वयं होती है तो विभिन्न वैद्युत परिवर्तन उत्पन्न होता है, जो बहुत तेजी से कोशिका झिल्ली पर गमन करता है। तंत्रिका कोशिका जब उत्तेजित होती है तब विभव परिवर्तन तंत्रिका कोशिका के अंतिम छोर पर पहुँचता है तथा आस-पास की तंत्रिकोशिका (neuron) एवं अन्य कोशिकाओं को या तो उद्दीपित करता है अथवा उन्हें उद्दीपित होने से रोकता है। (आप इसके बारे में अध्याय 21 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

7.2 अंग और अंगतंत्र

बहुकोशीय प्राणियों में उपर्युक्त वर्णित ऊतक संगठित होकर अंग और अंगतंत्र की रचना करते हैं। इस तरह का संगठन लाखों कोशिकाओं द्वारा निर्मित जीव की सभी क्रियाओं को अधिक दक्षतापूर्वक एवं समन्वित रूप से चलाने के लिए आवश्यक होता है। शरीर के प्रत्येक अंग एक या एक से अधिक प्रकार के ऊतकों से बना होता हैं। उदाहरणार्थ, हृदय में चारों तरह के ऊतक होते हैं, उपकला, संयोजी, पेशीय तथा तंत्रकीय ऊतक। ध्यान पूर्वक अध्ययन के बाद हम यह देखते हैं कि अंग और अंगतंत्र की जटिलता एक निश्चित इंद्रियगोचर प्रवृत्ति को प्रदर्शित करती है। यह इंद्रियगोचर प्रवृत्ति एक विकासीय प्रवृत्ति कहलाती है। (इसके बारे में आप कक्षा 12 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

यहाँ पर आपको तीन जीवों के विभिन्न विकासीय स्तर के बारे में बताया जा रहा है, जिसमें आपको शारीर (anatomy) और आकारिकी (mortphology) के संगठन एवं क्रियाविधि के बारे में जानकारी प्राप्त होगी। आकारिकी आपको जीवों की बाह्य संरचना या बाह्य दिखने वाले आकार का अध्ययन कराती है। पौधों या सूक्ष्म जीवों के संदर्भ में, आकारिकी शब्द का वस्तुतः मतलब यही है। प्राणियों के संबंध में आकारिकी का मतलब शरीर के बाह्य अंगों की बनावट या शरीर के बाह्य भागों का अध्ययन है। प्राणियों में शारीर का पारंपरिक मतलब आंतरिक अंगों की संरचना के अध्ययन से है। अब आप केंचुए, कॉकरोच तथा मेंढक के आकारिकी एवं शारीरकी का अध्ययन करेंगे। जो अकशेरुकी तथा कशेरुकी का क्रमशः प्रतिनिधित्व करते हैं।

7.3 केंचुआ

केंचुए लाल भूरे रंग के स्थलीय अकशेरुकी प्राणी होते हैं, जो कि नम मिट्टी की ऊपरी सतह में निवास करते हैं। दिन के समय ये जमीन के अंदर स्थित बिलों में रहते हैं, जो कि ये मिट्टी को छेदकर और निगलकर बनाते हैं। बगीचों में ये अपने द्वारा एकत्रित उत्सर्जी मल पदार्थों के बीच ढूँढ़े जा सकते हैं। इन उत्सर्जी मल पदार्थ को कृमि क्षिप्ति (worm casting) कहते हैं। *फेरेटिमा* व *लम्ब्रिकस (Pheretrima and Lumbricus)* सामान्य भारतीय केंचुए हैं।

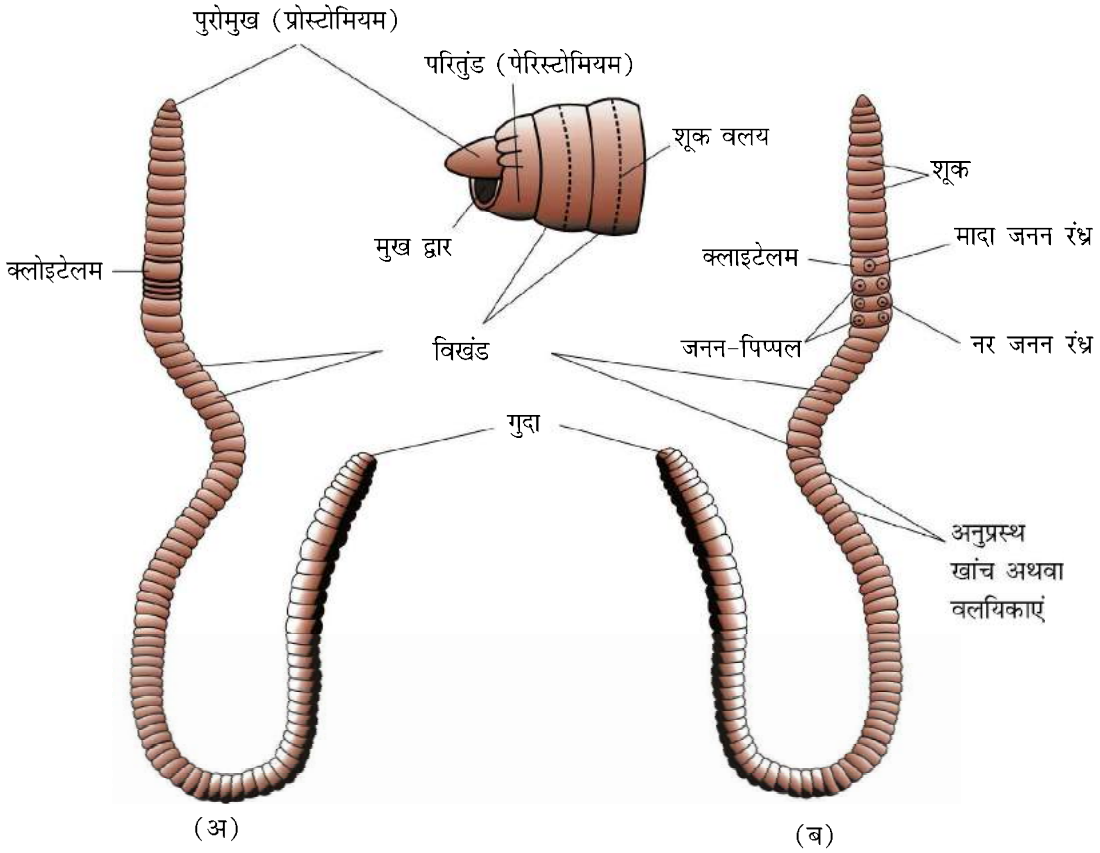

चित्र 7.9 केंचुए का शरीर (अ) पृष्ठ दृश्य (ब) अधर दृश्य (स) मुख द्वार दर्शाते हुए पार्श्व दृश्य

7.3.1 आकारिकी

इनका शरीर लंबा, और लगभग 100 - 120 समान समखंडों (metameres) में बँटा होता है। पृष्ठ तल पर एक गहरी मध्यरेखा (पृष्ठ रक्त वाहिका) दिखाई देती है। अधरतल पर जनन छिद्र पाए जाते हैं, जिसकी वजह से यह पृष्ठ तल से विभेदित किया जा सकता है। शरीर के अग्र भाग पर मुख एवं पुरोमुख (Prossomium) होते हैं। पुरोमुख एक पालि (lobe) है जो मुख को ढकने वाली एक फाननुमा संरचना है। यह फान मृदा दरारों को खोलकर कृमि को उसमें रेंग कर जाने में मदद करती है। पुरोमुख एक संवेदी संरचना है। शरीर का पहला खंड परितुंड (peristomium) या मुखखंड होता है, जिसमें मुख उपस्थित होता है। एक परिपक्व कृमि में एक चौड़ी ग्रंथिल गोलाकार पट्टी चौदहवें से सोलहवें खंड को घेरे रहती है। इन ग्रंथिल ऊतक वाले खंडों को **पर्याणिक** (clitellum) कहते हैं। इस प्रकार शरीर तीन प्रमुख भागों-अग्र-पर्याणिका, पर्याणिक और पश्च पर्याणिक खंडों में विभक्त होता है (चित्र 7.9)।

5-9 खंडों में अंतरखंडीय खांचों के अधर-पार्श्वीय भाग में चार जोड़ी शुक्रग्रहिका रंध्र (spermathecal apertures) स्थित होते हैं। एकल मादा जनन छिद्र चौदहवें खंड की मध्य अधर रेखा पर स्थित होता है। एक जोड़ा नर जनन छिद्र अठारवें खंड के अधर-पार्श्व में स्थित होते हैं। बहुत से छोटे छिद्र जिन्हें वृक्कक रंध्र कहते हैं, अधर तल

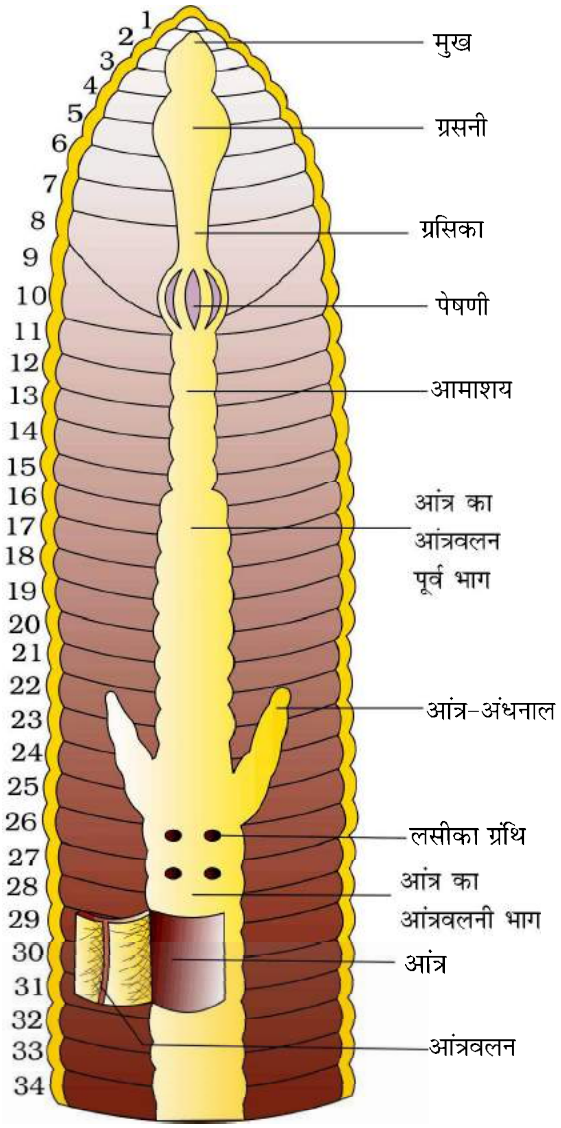

चित्र 7.10 केंचुए की आहार नाल

पर लगभग संपूर्ण शरीर पर पाए जाते हैं। इन छिद्रों के द्वारा उत्सर्गिकाएं शरीर के बाहर की ओर खुलती हैं। शरीर के प्रथम, अंतिम एवं पर्याणिका खंडों को छोड़कर समस्त देहखंडों में S आकार के **शूक** (setae) पाए जाते हैं, जो प्रत्येक खंड के मध्य में स्थित उपकला गर्त में धँसे रहते हैं। शूक छोटी बाल के समान संरचना होती है, जो कि फैल तथा सिकुड़ सकती है तथा गति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा निभाती है।

7.3.2 आंतरिक आकारिकी

केंचुए का शरीर एक पतली अकोशिकीय परत से ढका रहता है जिसे **उपत्वचा** कहते हैं। इसके नीचे अधिचर्म, दो पेशीय (गोलाकार व लंबवत्) परतें तथा सबसे अंदर की ओर देहगुहीय उपकला पाई जाती है। अधिचर्म स्तंभाकार उपकला कोशिकाओं की एक स्तर की बनी हुई होती है, जिसमें अन्य प्रकार की कोशिकाएं जैसे स्रावी ग्रंथि कोशिकाएं भी सम्मिलित हैं।

आहारनाल शरीर के प्रथम से अंतिम खंड तक एक लंबी, सीधी नली के रूप में उपस्थित होती है (चित्र 7.10)। प्रथम खंड पर उपस्थित मुख, प्रथम से तृतीय खंड में फैली मुखगुहा में खुलता है, जो ग्रसनी की ओर अग्रसर होती है और चौथे खंड में खुलती है। ग्रसनी एक छोटी संकरी नलिका में खुलती है, जिसे ग्रसिका कहते हैं, यह पाँचवे से सातवें खंड तक पाई जाती है, तथा एक पेशीय पेषणी (gizzard) आठवें और नवें खंड तक चलती है। यह सड़ी पत्तियों और मिट्टी आदि के कणों को पीसने में मदद करती है। आमाशय नौ से चौदह खंड तक स्थित होता है। केंचुए का भोजन सड़ी-गली पत्तियाँ और मिट्टी में मिश्रित कार्बनिक पदार्थ होते हैं। आमाशय में स्थित केल्सीफेरस ग्रंथियाँ ह्यूमस में उपस्थित- ह्यूमिक अम्लों को उदासीन बना देती है। आंत्र पंद्रहवें खंड से प्रारंभ होकर अंतिम खंड तक एक लंबवत नलिका के रूप में मिलती है। छब्बीसवें खंड में आंत्र से एक जोड़ी छोटी और शंक्वाकार आंत्रिक अंधनाल निकलती हैं। आंत्र का विशिष्ट गुण जो 26 खण्ड से प्रारंभ होता है तथा अन्तिम 23-25 खण्डों को छोड़कर आंत्र की पृष्ठ सतह में आंतरिक वलन, भित्तिभंज का पाया जाता है, जिसे **आंत्रवलन** (typhlosole) कहते हैं। यह वलन आंत्र में अवशोषण के प्रभावी क्षेत्र में वृद्धि कर देता है। आहार नाल, शरीर के अंतिम खंड पर एक छोटे छिद्र के रूप में खुलती है। जिसे गुदा (anus) कहते हैं। केंचुआ कार्बनिक पदार्थों से भरपूर मृदा को भोजन के रूप में निगलता है, आहारनाल से गुजरते समय,

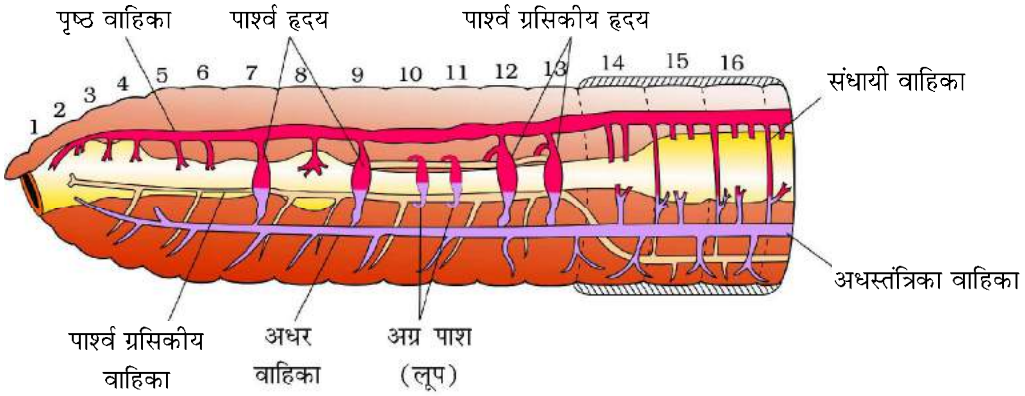

चित्र 7.11 संवृत परिसंचरण तंत्र

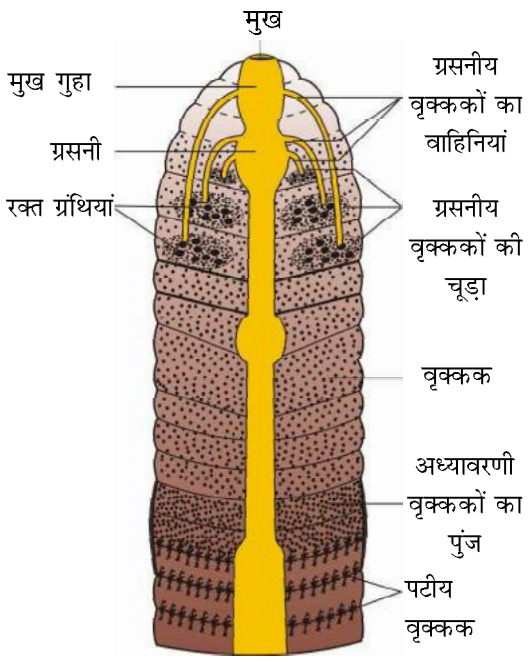

चित्र 7.12 केंचुए का वृक्कक-तंत्र

पाचक रस एंजाइमों का स्राव होता है जो कि पदार्थों के साथ घुल-मिल जाता है। ये एंजाइम जटिल भोज्य कणों को सूक्ष्म अवशोषण योग्य कणों में बदल देते हैं ये सरल अणु (molecules) आहारनाल-झिल्ली द्वारा अवशोषित करके उपयोग में लाए जाते हैं।

फेरिटिमा (केंचुए) का रुधिर परिसंचरण तंत्र बंद प्रकार का होता है, जिसमें रुधिर वाहिकाएं, केशिकाएं, हृदय होता है (चित्र 7.11)। बंद रुधिर परिसंचरण तंत्र के कारण रुधिर का (vessels) हृदय तथा रक्त वाहिनियों तक ही सीमित रहता है। संकुचन रक्त परिसंचरण को एक दिशा में रखता है। सूक्ष्म रुधिर वाहिकाएं रक्त को आहारनाल, तंत्रिका रज्जु और शरीर भित्ति तक पहुँचाती हैं। रुधिर ग्रंथियाँ चौथे, पाँचवें और छठे देह खंड पर पाई जाती हैं। ये ग्रंथियाँ हीमोग्लोबिन तथा रुधिर कोशिकाओं का निर्माण करती हैं जो रुधिर प्लाज्मा में घुल जाती हैं। इनकी प्रकृति भक्षकाण्विक होती है। केंचुए में विशिष्ट श्वसन तंत्र नहीं होता। श्वसन (गैस) विनिमय शरीर की आर्द्र सतह से उनकी रुधिर धारा में संपन्न होता है।

उत्सर्जी अंग खंडों में व्यवस्थित और वलयित नलिकाओं के बने होते हैं, जिन्हें वृक्कक (nephridia) कहते हैं। ये वृक्कक तीन प्रकार के होते हैं। (i) पटीय (septal) वृक्कक 15 वें खंड से अंतिम खंड के दोनों ओर अंतर खंडीय पटों पर पाए जाते हैं तथा ये आंत्र में खुलते हैं। (ii) अध्यावरणी वृक्कक जो शरीर की देह भित्ति के आंतरिक आस्तर पर तीसरे खंड से अंतिम खंड तक चिपके रहते हैं तथा शरीर की सतह पर खुलते हैं। (iii) ग्रसनीय वृक्कक चौथे, पाँचवें एवं छठे खंड में तीन युग्मित गुच्छों के रूप में पाए जाते हैं, (चित्र 7.12)। ये विभिन्न प्रकार के वृक्कक संरचना में मूलत: समान होते हैं।

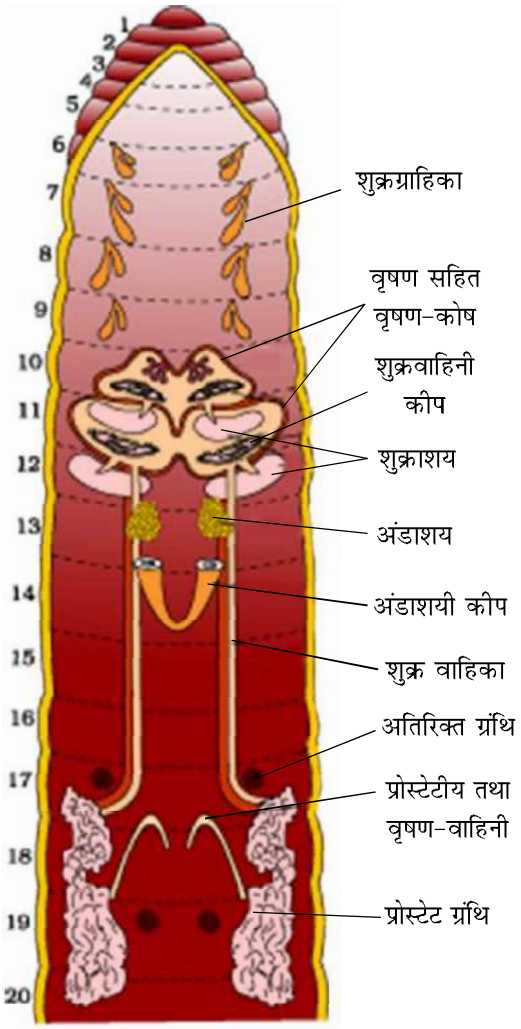

चित्र 7.13 केंचुए का जनन तंत्र

वृक्कक शरीर तरल के आयतन एवं संगठन का नियमन करते हैं। वृक्कक कीपनुमा सिरे से प्रारंभ होता है, जो गुहीय कक्ष से अतिरिक्त द्रव को संचित करता है। कीप वृक्कक के नलिकीय भाग से जुड़ा रहता है, जो उत्सर्जी पदार्थों को छिद्र द्वारा शरीर से एकत्र कर आहार नाल में बाहर डालता है।

तंत्रिका तंत्र मूलत: खंडीय गुच्छिकाओं (ganglia) के रूप में दोहरी अधर तंत्रिका रज्जु पर व्यवस्थित होते हैं। बहुत सी तंत्रिका कोशिकाएं इकट्ठी होकर गुच्छिका का निर्माण करती हैं। अग्र सिरे पर (तीसरे व चौथे खंड में) तंत्रिका रज्जु दो सिरों में विभक्त होकर पार्श्वत: ग्रसिका को घेरते हुए पृष्ठ सतह पर प्रमस्तिष्क-गुच्छिका (cerebral ganglia) से मिलती है। इस प्रकार तंत्रिका वलय बन जाता है। तंत्रिका वलय, प्रमस्तिष्क गुच्छिका के साथ मिलकर मस्तिष्क का निर्माण करती है। प्रमस्तिष्क गुच्छिका, वलय की अन्य तंत्रिकाओं के साथ मिलकर संवेदी आवेगों और पेशीय अनुक्रियाओं (responses) को समाकालित करती है।

संवेदी तंत्र में आँखों का अभाव होता है; लेकिन इसमें कुछ प्रकाश और स्पर्श संवेदी अंग (ग्राही कोशिकाएं) विकसित होते हैं, जो प्रकाश की तीव्रता के अंतर को महसूस कर सकते हैं तथा पृथ्वी के कंपन को भी महसूस कर लेते हैं। केंचुए में विशेष प्रकार के रसायन संवेदी अंग, स्वादग्राही (tasterceptor) होते हैं, जो कि रासायनिक उद्दीपनों के लिए प्रतिक्रिया करते हैं। ये संवेदी अंग कृमि के अग्र भाग में पाए जाते हैं।

केंचुए उभयलिंगी (heremophrodite) होते हैं अर्थात् एक ही प्राणी में वृषण (नर) एवं अंडाशय (मादा) दोनों जनन अंग मिलते हैं। इनमें 10वें व 11वें खंड में 2 जोड़ी वृषण (testes) होते हैं (चित्र 7.13)। इनकी शुक्र-वाहिकाएं अठारहवें (vasa deferentia) खंड तक जाती हैं जहाँ ये प्रोस्टेट वाहिनी (duct) से जुड़ जाती हैं। दो जोड़ी सहायक अतिरिक्त ग्रंथियाँ, सत्रहवें तथा उन्नीसवें खंड में पाई जाती हैं। संयुक्त प्रोस्टेट (spermatic) और शुक्राणु वाहिनी अठारहवें खंड के अधरपार्श्व में एक जोड़ा नर जनन छिद्र द्वारा बाहर खुलती है। साथ ही छठे से नौवें खंड तक प्रत्येक खंड में एक छोटे थैलेनुमा संरचनाएं चार जोड़े शुक्राणु - धानियाँ पाई जाती हैं। यह मैथुन के दौरान शुक्राणुओं को प्राप्त कर संग्रहित करती हैं। एक जोड़ी अंडाशय बारहवें और तेरहवें खंड के आंतरखंडीय पट पर स्थित होते है। अंडाशय के नीचे अंडवाहिनी मुखिका पाई जाती है, जो अंडवाहिनी तक होती है। ये आपस में जुड़ कर चौदहवें खंड के अधरतल पर मात्र एक मादा जनन - छिद्र के रूप में बाहर खुलती है।

शुक्राणुओं के आपस में आदान-प्रदान की प्रक्रिया मैथुन के द्वारा होती है। जब एक कृमि दूसरे कृमि को पाता है तथा उनके जनद द्वार (gonadal opening) एक दूसरे के सानिध्य में आते हैं तो वे अपने शुक्राणुओं से भरे थैलों को जिन्हें शुक्राणुधर कहते हैं बदल लेते हैं। पर्याणिका की ग्रंथि कोशिकाओं द्वारा (ककून) उत्पन्न कोकूनों में परिपक्व शुक्राणु व अंड कोशिकाओं तथा तरल जमा किया जाता है। निषेचन एवं परिवर्धन कोकून के अंदर होता है जिसे कृमि मृदा में छोड़ देता है। अंड व शुक्राणु कोशिकाओं का कोकून के अंदर ही निषेचन हो जाता है। कृमि इन्हें अपने शरीर से अलग कर देता है व मृदा (नम स्थान) के ऊपर या अंदर छोड़ देता है। कृमि भ्रूण कोकून में रहते हैं। लगभग तीन सप्ताह के बाद लगभग चार की औसत से कोकून 2-20 शिशु कृमि का निर्माण करता है। कृमि में परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है अर्थात् लार्वा अवस्था नहीं होती है।

केंचुआ किसानों का मित्र कहलाता है। यह मिट्टी में छोटे-छोटे बिल बनाता है, जिससे मिट्टी छिद्रित हो जाती है और बढ़ते पौधों की जड़ों के लिए वायु की उपलब्धता और उनका नीचे की ओर बढ़ना सुगम हो जाता है। इस प्रकार केंचुओं द्वारा मिट्टी को उपजाऊ बनाने की विधि या मिट्टी की उर्वर शक्ति बढ़ाने की विधि को कृमि कंपोस्ट खाद निर्माण कहते हैं। केंचुए मछली पकड़ने के लिए प्रलोभक के रूप में प्रयोग में भी लिए जाते हैं।

7.4 कॉकरोच (तिलचट्टा)

कॉकरोच चमकदार भूरे अथवा काले रंग के सपाट शरीर वाले प्राणी हैं; जिन्हें कि संघ (फाइलम) आर्थोपोडा (संधिपाद) की वर्ग इन्सेक्टा (कीटवर्ग) में सम्मिलित किया गया है। उष्णकटिबंधीय भाग में चमकीले पीले, लाल तथा हरे रंग के कॉकरोच अक्सर दिखाई दे जाते हैं। इनका आकार 1/4-3 इंच (0.6-7.6 सेमी.) होता है। इनमें लंबी शृंगिका (antenna) पैर तथा ऊपरी शरीर भित्ति में चपटी वृद्धि होती है जो कि सिर को ढके

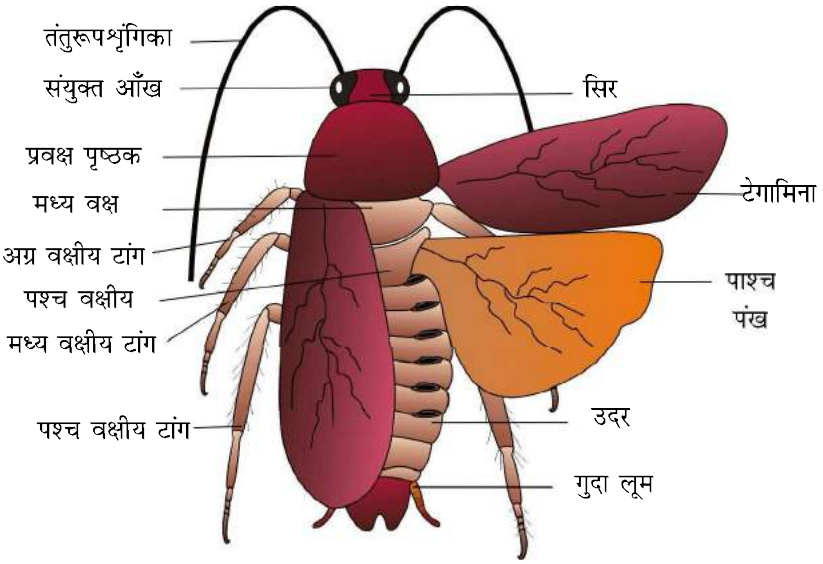

चित्र 7.14 तिलचट्टे का बाह्य चित्र

रहती है। समस्त संसार में ये रात्रिचर, सर्वभक्षी प्राणी हैं तथा नम जगह पर मिलते हैं। ये मनुष्यों के घर में रहकर गंभीर पीड़क एवं अनेक प्रकार के रोगों के वाहक हैं।

7.4.1 बाह्य आकारिकी

सामान्य वयस्क कॉकरोच, जाति *पेरिप्लेनेटा अमेरिकाना* का 34-53 मिमी. लंबा तथा पंखों वाला होता है, पंख नर में उदर के आखिरी छोर से भी आगे बढ़े होते हैं।

कॉकरोच का शरीर मुख्य रूप से खंडों में बँटा होता है, तथा इसके तीन मुख्य भाग होते हैं। सिर, वक्ष तथा उदर (चित्र 7.14)। इसका पूरा शरीर मजबूत काईटिन युक्त बाह्य कंकाल (भूरे रंग का) का बना होता है। प्रत्येक खंड में, बाह्य कंकाल में मजबूत पट्टिकाएं होती हैं जिन्हें कठक (sclerites) (पृष्ठवाली-पृष्ठकांश और अधरवाली-अधरकांश) कहते हैं, ये खंड आपस में एक पतली (महीन) व लचीली झिल्ली से जुड़े होते हैं, जिसे संधिकारी-झिल्ली या संधि झिल्ली कहते हैं।

शरीर के अग्र भाग में स्थित सिर त्रिकोणीय होता है। शरीर के अनुदैर्घ्य अक्ष के साथ लगभग समकोण बनाता है। यह छः खंडों के मिलने से बनता है तथा अपनी लचीली गर्दन के कारण सभी दिशाओं में घूम सकता है। सिर संपुटिका पर एक जोड़ी संयुक्त नेत्र होते हैं। आँखों के आगे झिल्लीयुक्त सॉकेट से धागे जैसी एक जोड़ी शृंगिका निकलती है। शृंगिका में संवेदी ग्राही उपस्थित होते हैं, जो वातावरणीय दशाओं को मापने का काम करते हैं। सिर के आगे वाले छोर पर उपांग लगे होते हैं, जिनसे काटने व चबाने वाले मुखांग बनते हैं। मुखांग में एक जोड़ी ऊर्ध्वोष्ठ ऊपरी जबड़ा, एक जोड़ी चिबुकास्थि, एक जोड़ी जंभिका, एक अधारोष्ठ होता है। एक मध्य लचीली पालि जिसे अधोग्रसनी (hypophyanx) कहते हैं जिह्वा का कार्य करती है जो कि मुखांगों से घिरी गुहा में उपस्थित होती है (चित्र 7.15)। वक्ष मुख्यतः तीन भागों में बँटा होता है। अग्रवक्ष, मध्यवक्ष व पश्चवक्ष। सिरवक्ष से अग्रवक्षक एक छोटे प्रसार द्वारा जुड़ा रहता है जिसे गर्दन

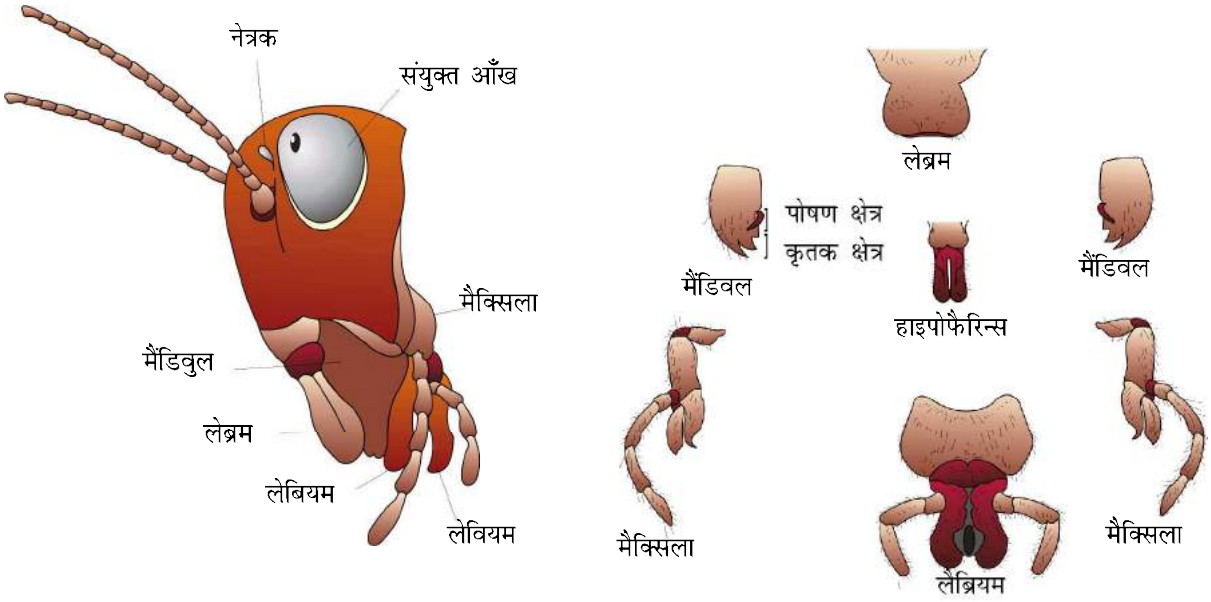

चित्र 7.15 तिलचट्टा के सिर का क्षेत्र (अ) सिर क्षेत्र को दर्शाते हुए (ब) मुख भाग

कहते हैं। प्रत्येक वक्षीय खंड में एक जोड़ी टांगें पाई जाती हैं कक्षांग (coxa), शिखरक (trochanter) ऊर्विका (femur), अंतर्जघिका (tibia) व गुल्फ (tarsus)। पंखों का प्रथम जोड़ा मध्यवक्ष से निकलता है तथा दूसरा पश्चवक्ष से। अग्र पंख (मध्यवक्षीय) जिन्हें प्रवार (tegmen) आच्छद कहते हैं। अपारदर्शी, गहरे रंग के होते हैं तथा विश्राम अवस्था में पश्चवक्ष पंखों से ढके रहते हैं। पश्चपंख पारदर्शी झिल्लीनुमा होते हैं तथा यह उड़ने में मदद करते हैं।

नर व मादा दोनों में उदर दस खंडीय होता है। सातवाँ अधरक नौकाकार होता है। तथा आठवां व नवां अधरक के साथ मिलकर एक जनन-कोष्ठ या जननिक कोष्ठ बनाता है जिसके अग्र भाग में मादा जनन छिद्र, स्पर्मेथिकल छिद्र व संपार्श्विक ग्रंथियाँ होती हैं। नर में केवल आठवाँ पृष्ठक ही सातवें खंड द्वारा ढका रहता है। नर-मादा दोनों में दसवें खंड पर एक जोड़ी संधियुक्त तंतुमय गुदीय लूम (cerci) होते हैं। इन लूमों के नीचे की ओर नर के नवें खंड में एक जोड़ी छोटे व धागे के समान गुदा शूक (anal stylels) होते हैं। मादा में शूक अनुपस्थित होते हैं।

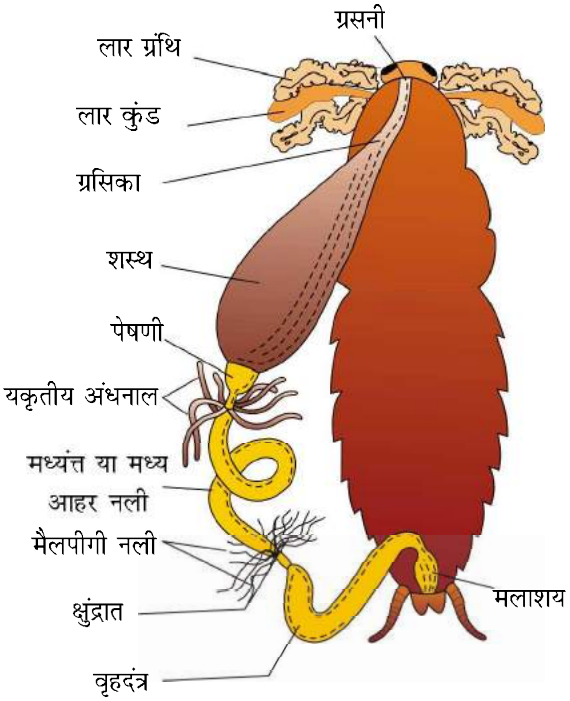

चित्र 7.16 तिलचट्टा की आहारनाल

7.4.2 आंतरिक आकारिकी

देहगुहा में स्थित आहारनाल तीन भागों-अग्रांत्र, मध्यांत्र एवं पश्चांत्र में बँटी होती है (चित्र 7.16)। मुख एक छोटी नलिकाकार ग्रसनी में खुलता है, जिससे एक सीधी और संकरी नली ग्रसिका निकलती है। ग्रसिका एक पतले भित्ती वाले कोष में खुलती है, जिसे अन्नपुट कहते हैं, जिसमें भोजन संग्रहीत रहता है। इसके पीछे ग्रंथिल जठर (proventriculus) अथवा पेषणी होती है। इसमें बाहर एक मोटा वर्तुल पेशी स्तर होता है तथा स्तर की उपत्वचा छः स्थानों पर मोटी होकर उपत्वचीय दांत बनाती है। ये दांत भोजन के मोटे कणों को पीसने में सहायक होते हैं। पूरा अग्रांत्र अंदर से उपत्वचा (क्यूटिकल) से आस्तरित रहता है। मध्यांत्र एक संकरी एवं समान व्यास की नलिका होती है, जिसमें उपत्वचा का आस्तर नहीं होता है। अग्रांत्र व मध्यांत्र के संधिस्थल पर अंगुली के समान छह से आठ अंध-नलिकाएं लगी रहती हैं, जिनके सिरे बंद रहते हैं। इनको यकृतीय या जठरीय अंधनाल कहते हैं, ये पाचकरस बनाती हैं। मध्यांत्र व पश्चांत्र के संधि स्थल पर लगभग 100-150 पतली पीले रंग की नलिकाएं होती है। जिन्हें

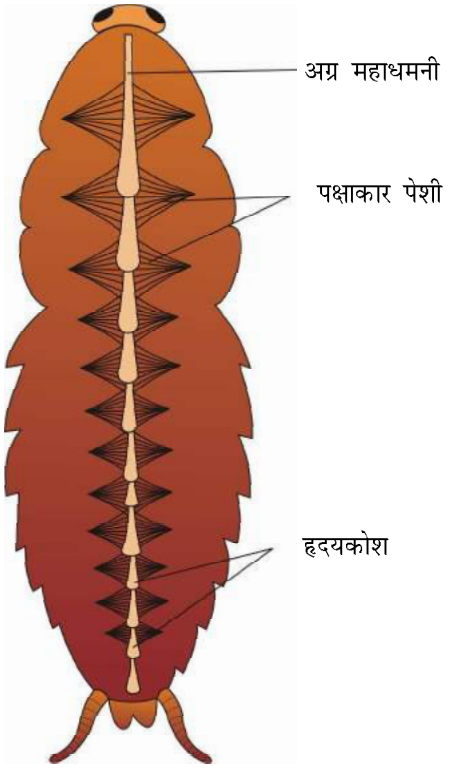

चित्र 7.17 तिलचट्टे का खुला परिसंचरण तंत्र

मैलपीगी नलिकाएं कहते हैं। ये हीमोलिंफ से उत्सर्जी पदार्थों के उत्सर्जन में सहायक होती हैं। पश्चांत्र, मध्यांत्र से थोड़ा चौड़ा होता है तथा क्षुदांत्र, वृहदांत्र एवं मूत्राशय में विभक्त रहता है। मलाशय बाहर की ओर गुदा द्वारा खुलता है।

तिलचट्टे में खुले प्रकार का परिसंचरण तंत्र होता है (चित्र 7.17) इसकी रुधिर वाहिनियाँ अल्पविकसित होती हैं और रुधिरगुहा में खुलती हैं तथा उसी में सभी अंतरंग अंग डूबे रहते हैं, जिसे रुधिरलसीका कहते हैं। रुधिरलसीका (हीमोलिंफ) रंगहीन प्लाज्मा व रुधिराणुओं से बना होता है। कॉकरोच का हृदय एक लंबी पेशीय नली होती है जो रुधि रगुहा में वक्ष और अधर की मध्य-पृष्ठीय रेखा के साथ-साथ स्थित है। हृदय कीपाकार कोष्ठकों में विभेदित होता है और दोनों तरफ आस्य (ostia) होते हैं।

श्वसन तंत्र शाखित श्वास नालों (trachea) के जाल का बना होता है। श्वासनाल, श्वास छिद्रों द्वारा खुलती हैं। हवा 10 जोड़ी श्वास छिद्रों द्वारा अंदर प्रवेश करती है जो कि शरीर की पार्श्व सतह पर व्यवस्थित होते हैं। श्वासनाल पुनः विभाजित होकर श्वासनलिकाएं बनाती हैं। यह हवा को श्वास नलिकाओं द्वारा शरीर के सभी भागों तक पहुँचाती हैं। श्वास छिद्रों का खुलना अवरोधनी द्वारा नियमित होता है। श्वासनलिकाओं पर गैसों का आदान प्रदान विसरण विधि द्वारा होता है।

तिलचट्टे में उत्सर्जन मैलपीगी नलिकाओं द्वारा होता है। प्रत्येक नलिका ग्रंथिल एवं रोमयुक्त उपकला द्वारा आस्तरित रहती है। ये नाइट्रोजनी-अपशिष्ट पदार्थों का अवशोषण करके उन्हें जैव रासायनिक क्रिया द्वारा यूरिक अम्ल में परिवर्तित कर देती है। यूरिक अम्ल पश्चांत्र द्वारा उत्सर्जित कर दिया जाता है। अतः यह कीट यूरिकाम्ल उत्सर्गी कहलाता है। इनके साथ-साथ वसापिंड वृक्काणु उपत्वचा और यूरेकोस ग्रंथियां भी उत्सर्जन में सहायक होती हैं।

तिलचट्टा में **तंत्रिका तंत्र** एक श्रेणी बद्ध खंडीय व्यवस्थित गुच्छिकाओं का बना होता है, जो अधर तल पर युग्मित (paired) अनुदैर्घ्य संयोजक से जुड़ी रहती हैं। तीन गुच्छिकाएं वक्ष में और छः उदर में स्थित होती हैं। कॉकरोच का तंत्रिका तंत्र पूरे शरीर में फैला रहता है। सिर मे तंत्रिका तंत्र का थोड़ा सा हिस्सा रहता है। जबकि बाकी भाग शरीर के दूसरे भागों के अधर तल में उपस्थित रहता है, अब तक आप यह जान चुके होंगे कि कॉकरोच का सिर काटने के बाद भी एक सप्ताह तक जीवित क्यों रहता है? सिर में मस्तिष्क अधिग्रसिका गुच्छिका द्वारा निरूपितत (represent) किया जाता है, जो कि शृंगिकाओं एवं संयुक्त नेत्र को तंत्रिकाएं भेजता है। तिलचट्टे में संवेदन अंग, शृंगिका, आँख, मैक्सिलरी स्पर्शक, लेबियल स्पर्शक तथा गुदा रोमक इत्यादि होते हैं। शृंगिका, स्पर्शक ओर रोमक स्पर्श संवेदी होते हैं। सिर के पृष्ठ सतह पर एक जोड़ी संयुक्त नेत्र पाए जाते हैं। प्रत्येक संयुक्त नेत्र में लगभग 2000 षटकोणीय नेत्राशंक (ommatia) होते हैं। कई नेत्रांशकों की मदद से तिलचट्टा एक ही वस्तु की कई प्रतिछायाएं देख सकता है। इस प्रकार की दृष्टि को मोजेक दृष्टि कहते हैं, जिसकी सुग्राहिता अधिक परंतु विभेदन कम होता है, यह सामान्यतया रात के समय होती है, अतः इसे रात्रि दृष्टि कहा जाता है।

तिलचट्टा द्विलिंगी होता है तथा दोनों लिंगों में पूर्ण विकसित जनन अंग होते हैं (चित्र 7.18)। नर जननांग एक जोड़ी वृषण के रूप में विद्यमान होते हैं, जो चौथे से छठे उदरीय

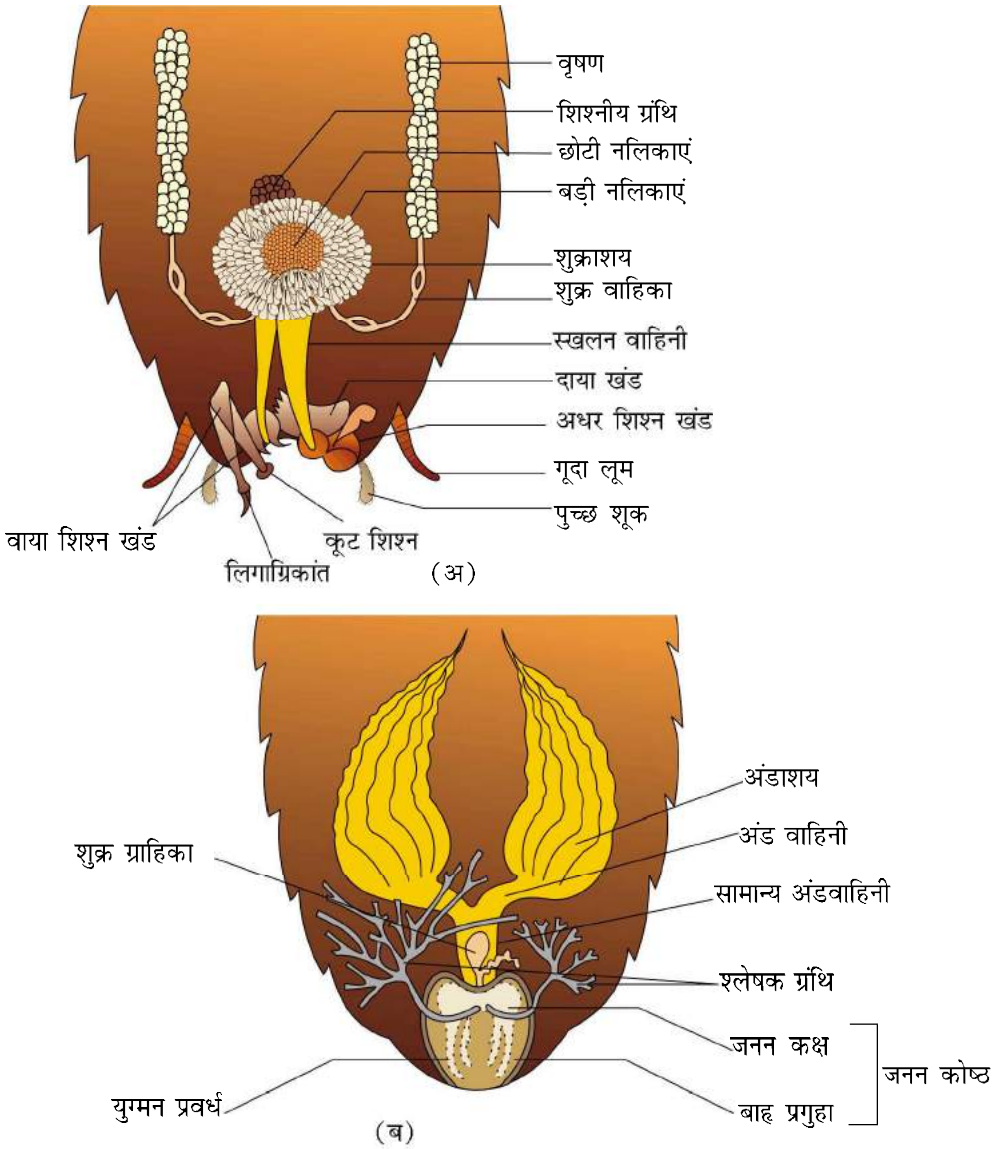

चित्र 7.18 तिलचट्टे का जनन तंत्र (अ) नर (ब) मादा

खंड के पार्श्व में व्यवस्थित होते हैं। प्रत्येक वृषण से एक पतली नलिका जिसे शुक्रवाहिनी कहते हैं, शुक्राशय से होते हुए स्खलनीय वाहिनी में खुलती है। ये स्खलनीय वाहिनी नर-जनन छिद्र में खुलती है जो गुदा के अधर में होता है। एक विशिष्ट छत्रक रूपी ग्रंथि उदर के छठे एवं सातवें खंड में होती है, जो सहायक जनन-ग्रंथि का कार्य करती है। बाह्य जननेन्द्रिय नर गोनोफोफिसस (युग्मनप्रवर्ध) अथवा शिश्नखंड के रूप में होती है जननरंध्र के चारों ओर काइटिनी असममितीय संरचना है। शुक्राणु, शुक्राशय में संग्रहित रहते हैं और पुंज के रूप में आपस में चिपके रहते हैं। इन पुंजों को शुक्राणुधर कहते हैं। मैथुन के समय ये विसर्जित कर दिए जाते हैं। मादा जनन तंत्र में दो बृहद् आकार के अंडाशय होते हैं, जो उदर के दो से छठे खंड के पार्श्व में स्थित होते हैं। प्रत्येक अंडाशय आठ अंडाशयी नलिका अथवा अंडाशयकों का बना होता है, जिसमें परिवर्धित हो रहे

अंडों की एक शृंखला होती है। दोनों तरफ के अंडाशयों की अंडवाहिनियां मिलकर एक मध्य अंडवाहिनी का निर्माण करती है, जिसे योनि कहते हैं जो जनन कोष्ठ में खुलती है। छठे खंड में एक जोड़ी शुक्राणुधानी होती है, जो जनन कक्ष में खुलती है।

शुक्राणु, शुक्राणुधर के द्वारा स्थानांतरित होते हैं। इनके निषेचित अंडें एक संपुट में संकोशित होते हैं, जिसे अंडकवच कहते हैं। अंडकवच गहरे लाल रंग से काले भूरे रंग का 3/8 इंच (8 मिमी.) लंबा संपुट (केप्स्यूल) होता है। ये संपुट दरारों एवं आर्द्रता युक्त तथा भोजन वाले स्थानों पर चिपका दिए जाते हैं। औसतन एक मादा 9-10 अंडकवच उत्पन्न करती है और प्रत्येक में 14-16 अंडे होते हैं। *पी.अमेरिकाना (P. americana)* का परिवर्धन में पौरोमेटाबोलस प्रकार का होता हैं अर्थात् इनके परिवर्धन में अर्भक (निंफ्स) अवस्था मुख्य रूप से पाई जाती है। अर्भक वयस्क के समान दिखते हैं। अर्भक में वृद्धि कायांतरण के द्वारा होती है तथा लगभग तेरह निर्मोचन के बाद यह वयस्क में बदल जाता है। अंतिम अर्भक अवस्था से पहली अवस्था में पक्षतल्प (wing pad) पाए जाते हैं

तिलचट्टों की बहुत सी जंगली जातिया पाई जाती हैं। तथा इनका कोई आर्थिक महत्व नहीं है। कुछ जातियां मनुष्य के वास-स्थान में अथवा उसके आस-पास फलती-फूलती होती हैं। ये पीड़क के रूप में कार्य करते हैं; क्योंकि ये खाद्य पदार्थों को नष्ट कर देते हैं तथा अपने दुर्गंधयुक्त उत्सर्ग द्वारा संदूषित कर देते हैं। भोज्य पदार्थों को संदूषित कर अनेक जीवाष्पीय बीमारियों को फैलाते हैं।

7.5 मेंढक

मेंढक वह प्राणी है जो मीठे जल तथा धरती दोनों पर निवास करता है तथा कशेरुकी संघ के एंफीबिया वर्ग से संबंधित होता है। भारत में पाई जाने वाली मेंढक की सामान्य जाति *राना टिग्रीना* है।

इसके शरीर का ताप स्थिर नहीं होता है। शरीर का ताप वातावरण के ताप के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इस प्रकार के प्राणियों को असमतापी या अनियततापी कहते हैं। मेंढक के रंग को परिवर्तित होते हुए आपने अवश्य देखा होगा, जिस समय ये घास तथा नम जमीन पर होते हैं। क्या आप बता सकते हो, ऐसा क्यों होता है? उनमें अपने शत्रुओं से छिपने के लिए रंग परिवर्तन की क्षमता होती है, जिसे छद्मावरण कहा जाता है। इस रक्षात्मक रंग परिवर्तन क्रिया को अनुहरण (minimicry) कहते हैं। आपने यह भी देखा होगा कि मेंढक शीत व ग्रीष्म ऋतु में नहीं दिखते। इस अंतराल में ये सर्दी तथा गर्मी से अपनी रक्षा करने के लिए गहरे गड्ढों में चले जाते हैं। इस प्रक्रिया को क्रमशः शीत निष्क्रियता (hibernation) व ग्रीष्म निष्क्रियता (aestivation) कहते हैं।

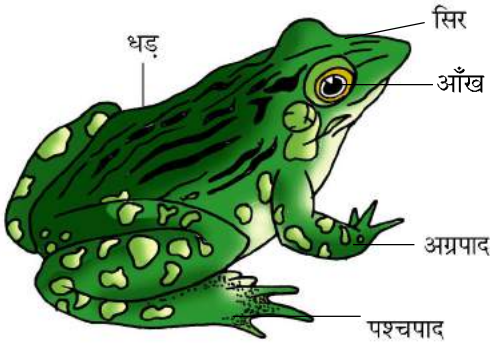

चित्र 7.19 मेंढक का बाह्य चित्र

7.5.1 बाह्य आकारिकी

क्या आपने कभी मेंढक की त्वचा को छुआ है? मेंढक की त्वचा श्लेषमा (म्युकस) से ढकी होने के कारण चिकनी तथा फिसलनी होती है। इसकी त्वचा सदैव आर्द्र रहती है। मेंढक की ऊपरी सतह धानी हरे रंग की होती है, जिसमें अनियमित धब्बे होते हैं, जबकि नीचे की सतह हल्की पीली होती है। मेंढक कभी पानी नहीं पीता;

बल्कि त्वचा द्वारा इसका अवशोषण करता है।

मेंढक का शरीर सिर व धड़ में विभाजित रहता है। (चित्र 7.19) पूंछ व गर्दन का अभाव होता है। मुख के ऊपर एक जोड़ी नासिका द्वार खुलते हैं। आँखें बाहर की ओर निकली व निमेषकपटल से ढकी होती हैं ताकि जल के अंदर आँखों का बचाव हो सके। आँखों के दोनों ओर (कान) टिम्पैनम या कर्ण पटह उपस्थित होते हैं, जो ध्वनि संकेतों को ग्रहण करने का कार्य करते हैं। अग्र व पश्चपाद चलने, फिरने, टहलने व गड्ढा बनाने का काम करते हैं। अग्र पाद में चार अंगुलियाँ होती हैं; जबकि पश्चपाद में पाँच होती हैं। तथा पश्चपाद लंबें व मांसल होते हैं। पश्च पाद की झिल्लीयुक्त अंगुलि जल में तैरने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मेंढक में लैंगिक द्विरूपता देखी जाती है। नर मेंढक में आवाज उत्पन्न करने वाले वाक् कोष (vocal sacs) के साथ-साथ अग्रपाद की पहली अंगुलि में मैथुनांग होते हैं। ये अंग मादा मेंढक में नहीं मिलते हैं।

7.5.2 आंतरिक आकारिकी

मेंढक की देह गुहा में पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र, तंत्रिका तंत्र, संचरण तंत्र, जनन तंत्र पूर्ण अच्छी तरह परिवर्धित संरचनाओं एवं कार्यों युक्त होते हैं। मेंढक का पाचन तंत्र आहार नाल तथा आहर ग्रंथि का बना होता है (चित्र 7.20)। मेंढक मांसाहारी है, अतः इसकी

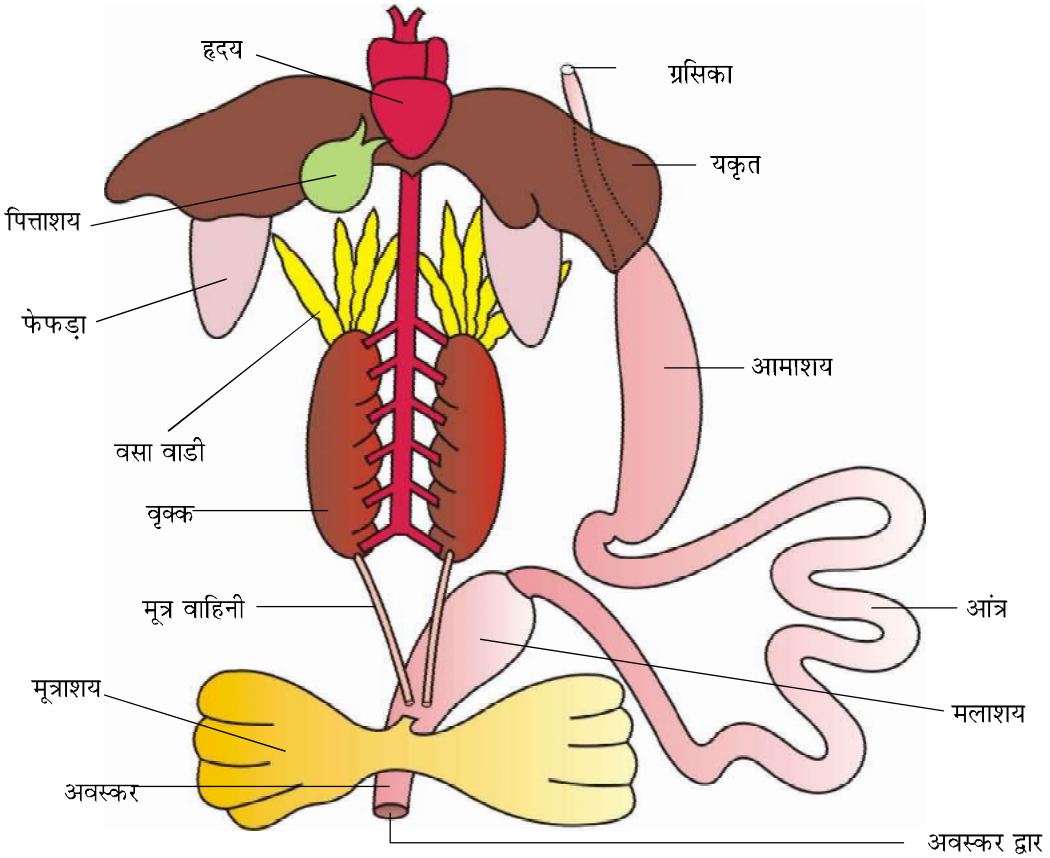

चित्र 7.20 मेंढक की आंतरिक संरचना जो पूर्ण आहार तंत्र दर्शाती है।

आहारनाल लंबाई में छोटी होती है। इसका मुख, मुखगुहिका में खुलता है जो ग्रसनी से होते हुए ग्रसिका तक जाती है। ग्रसिका एक छोटी नली है जो आमाशय में खुलती है। आमाशय आगे चलकर आंत्र, मलाशय और अंत में अवस्कर (cloaca) द्वारा बाहर खुलता है। इसका मुँह मुखगुहिका द्वारा ग्रसनी में खुला है जो ग्रसिका तक जाती है।

यकृत पित्त रस स्रावित करता है जो पित्ताशय में एकत्रित रहता है। अग्नाश्य जो एक पाचक ग्रंथि है, जो अग्नाशयी रस स्रवित करता है जिसमें पाचक एंजाइम होते हैं। मेंढक अपनी द्विपालित जीभ से भोजन का शिकार पकड़ता है। इसके भोजन का पाचन आमाशय की दीवारों द्वारा स्रवित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा पाचक रसों द्वारा होता है। अर्धपाचित भोजन काइम कहलाता है जो आमाशय से ग्रहणी में जाता है। ग्रहणी पित्ताशय से पित्त और अग्नाशय से अग्नाशयी रस मूल पित्त वाहिनी द्वारा प्राप्त करती है। पित्तरस वसा तथा अग्नाशयी रस कार्बोहाइड्रेटों तथा प्रोटीन का पाचन करता है। पाचन की अंतिम प्रक्रिया आँत में होती है। पाचित भोजन आँत के अंदर अंकुर और सूक्ष्मांकुरों द्वारा अवशोषित होते हैं। अपाचित भोजन अवस्कर द्वार से बाहर निष्कासित कर दिया जाता है।

मेंढक जल व थल दोनों स्थानों पर दो विभिन्न विधियों द्वारा श्वसन कर सकते हैं। इसकी त्वचा एक जलीय श्वसनांग का कार्य करती है। इसे त्वचीय श्वसन कहते हैं। विसरण द्वारा पानी में घुली हुई ऑक्सीजन का विनिमय होता है। जल के बाहर त्वचा, मुख गुहा और फेफड़े वायवीय श्वसन अंगों का कार्य करते हैं। फेफड़ों के द्वारा श्वसन फुप्फसीय श्वसन कहलाता है। फेफेड़े एक लंबें अंडाकार गुलाबी रंग की थैलीनुमा संरचनाएं होती हैं, जो देहगुहा के वक्षीय भाग में पाई जाती हैं। वायु नासा छिद्रों से होकर मुख गुहा तथा फेफड़ों में पहुँचती है। ग्रीष्म निष्क्रियता व शीत निष्क्रियता के दौरान मेंढक त्वचा से श्वसन करते हैं।

मेंढक का परिसंचरण तंत्र, सुविकसित बंद प्रकार का होता है। इसमें लसीका परिसंचरण भी पाया जाता है। अर्थात् ऑक्सीजनित अथवा विऑक्सीजनित रक्त हृदय में मिश्रित हो जाते हैं। रुधिर परिसंचरण तंत्र हृदय, रक्त वाहिकाओं और रुधिर से मिलकर बनता है। लसीका तंत्र लसीका, लसीका नलिकाओं और लसीका ग्रंथियों का बना होता है। हृदय एक त्रिकोष्ठीय मांसल संरचना है, जो कि देह गुहा के ऊपरी भाग में स्थित है। यह पतली पारदर्शी झिल्ली, हृदय-आवरण (पेरीकार्डियम) द्वारा ढका रहता है। एक त्रिकोष्ठीय संरचना, जिसे शिराकोटर (साइनस वेनोसस) कहते हैं, हृदय के दाहिने अलिंद से जुड़ा रहता है तथा महाशिराओं से रक्त प्राप्त करता है। हृदय की अधर सतह पर दाएं अलिंद के ऊपर एक थैलानुमा रचना धमनी शंकु होता है, जिसमें निलय (ventricle) खुलता है। हृदय से रक्त धमनियों द्वारा शरीर के सभी भागों में भेजा जाता है। इसे धमनी तंत्र कहते हैं। शिराएं शरीर के विभिन्न भागों से रक्त एकत्रित कर हृदय में पहुँचाती हैं, यह शिरा-तंत्र कहलाता है। मेंढक में विशेष संयोजी शिराएं यकृत तथा आँतों के मध्य वृक्क तथा शरीर के निचले भागों के मध्य पाई जाती है। इन्हें क्रमशः यकृत निवाहिका तंत्र एवं वृक्कीय निवाहिका तंत्र कहते हैं। रक्त प्लेज्मा तथा रक्त-कणिकाओं से मिलकर बना है। रक्त कणिकाएं हैं- लाल रुधिर कणिकाएं (रक्ताणु) एवं श्वेत रुधिर कणिकाएं

(श्वेताणु) एवं पट्टिकाणु (प्लेटलेट)। लाल रुधिर कणिकाओं में लाल रंग का श्वसन रंजक हीमोग्लोबिन पाया जाता है। इन कणिकाओं में केंद्रक पाया जाता है। लसीका रुधिर से भिन्न होता है; क्योंकि इसमें कुछ प्रोटीन व लाल रुधिर कणिकाएं अनुपस्थित होती हैं। परिसंचरण के दौरान रक्त पोषकों गैसों व जल को नियत स्थानों तक ले जाता है। रुधिर परिसंचरण मांसल हृदय की पंपन क्रिया द्वारा होता है।

नाइट्रोजनी अपशिष्ट को शरीर से बाहर निकालने के लिए मेंढक में पूर्ण विकसित उत्सर्जी तंत्र होता है। उत्सर्जी अंग में मुख्यत: एक जोड़ी वृक्क, मूत्रवाहिनी, अवस्कर द्वार तथा मूत्राशय होते हैं। ये गहरे लाल रंग के सेम के आकार के होते हैं और देहगुहा में थोड़ा सा पीछे की ओर केशेरुक दंड के दोनों ओर स्थित होते हैं। प्रत्येक वृक्क कई सरंचनात्मक व क्रियात्मक इकाइयों, मूत्रजन नलिकाओं या वृक्काओं का बना होता है। नर मेंढक में मूत्र नलिका वृक्क से मूत्र जनन नलिका के रूप में बाहर आती है। मूत्रवाहिनी अवस्कर द्वार में खुलती है। मादा मेंढक में मूत्र वाहिनी एवं अंडवाहिनी अवस्कर द्वार में अलग-अलग खुलती हैं। एक पतली दीवार वाला मूत्राशय भी मलाशय के अधर भाग पर स्थित होता है, जो कि अवस्कर में खुलता है। मेंढक यूरिया का उत्सर्जन करता है इसलिए **यूरिया-उत्सर्जी** प्राणी कहलाता है। उत्सर्जी अपशिष्ट रक्त द्वारा वृक्क में पहुँचते हैं, जहाँ पर ये अलग कर दिए जाते हैं और उनका उत्सर्जन कर दिया जाता है।

नियंत्रण व समन्वय तंत्र मेंढक में पूर्ण विकसित होता है। इनमें अंत: स्रावी ग्रंथियाँ (endocrine system) व तंत्रिका तंत्र दोनों पाए जाते हैं। विभिन्न अंगों में आपसी समन्वयन कुछ रसायनों द्वारा होता है जिन्हें हॉर्मोन कहते हैं। ये अंत:स्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रावित होते हैं। मेंढक की मुख्य अंत:स्रावी ग्रंथियाँ हैं - पीयूष (पिट्यूटरी), अवटु (थॉइराइड), परावटु (पैराथाइॅराइड), थाइमस, पीनियल काय, अग्नाशयी द्वीपकाएं, अधि वृक्क (adrenal) और जनद (gonad)। तंत्रिका तंत्र (मस्तिष्क तथा मेरु रज्जु) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र, परिधीय तंत्रिका तंत्र (कपालीय व मेरु तंत्र) और स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (ओटोनोमिक नर्वस सिस्टम) अनुकंपी और परानुकंपी (सिंपेथेटिक व पैरासिंपेथिटक) तंत्र का बना होता है। मस्तिष्क से 10 जोड़ी कपाल तंत्रिकाएं निकलती है। मस्तिष्क, हड्डियों से निर्मित मस्तिष्क बॉक्स अथवा कपाल के अंदर बंद रहता है। यह अग्र मस्तिष्क, मध्य मस्तिष्क और पश्च मस्तिष्क में विभाजित होता है। अग्र मस्तिष्क में घ्राण पालियाँ, जुड़वाँ, युग्मित, प्रमस्तिष्क गोलार्ध और केवल एक अग्रमस्तिष्क पश्च (diencephalon) होते हैं। मध्य मस्तिष्क एक जोड़ा दृक पालियों का बना होता है। पश्च मस्तिष्क, अनुमस्तिष्क एवं मेडूला ऑब्लांगेटा का बना होता है। मेडूला ऑब्लांगेटा महारंध्र से निकलकर मेरुदंड में स्थित मेरुरज्जु से जुड़ा रहता है।

मेंढक में भिन्न प्रकार के संवेदी अंग पाए जाते हैं। जैसे- स्पर्श अंग (संवेदी पिप्पल) स्वाद अंग (स्वाद कलिकाएं) गंध (नासिका उपकला) दृष्टि (नेत्र) व श्रवण (कर्ण पटह और आंतरिक कर्ण)। इन सब में आँखें और आंतरिक कर्ण सुव्यवस्थित होते हैं और बचे हुए दूसरे संवेदी अंग केवल तंत्रिका सिरों पर कोशिकाओं के गुच्छे होते हैं। मेंढक में एक जोड़ी गोलाकार नेत्र गड्ढों में स्थित होते हैं। ये साधारण नेत्र होते हैं। मेंढक में बाह्य कर्ण

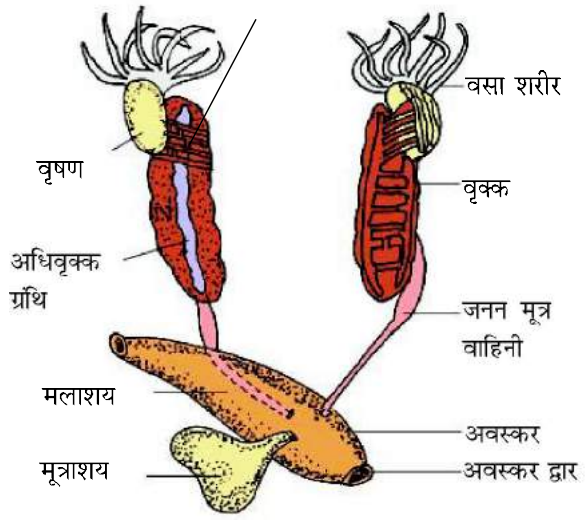

चित्र 7.21 नर जनन तंत्र

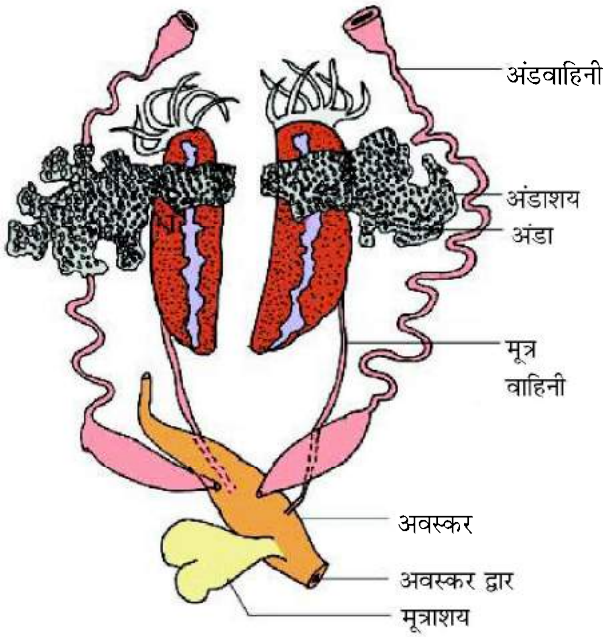

चित्र 7.22 मादा जनन तंत्र

अनुपस्थित होता है केवल कर्णपट ही बाहर से दिखाई देता है। कर्ण एक ऐसा अंग है जो सुनने के साथ-साथ संतुलन का काम भी करता है।

मेंढक में मादा व नर जनन तंत्र अलग एवं पूर्ण सुव्यवस्थित होते हैं। नर जननांग एक जोड़ी पीले अंडाकार वृषण होते हैं जो, वृक्क के ऊपरी भाग से पेरिटोनियम के दोहरीवलय, मेजोर्कियम नामक झिल्ली द्वारा चिपके रहते हैं। (चित्र 7.21)। शुक्र वाहिकाएं संख्या में 10-12 होती हैं जो वृषण से निकलने के बाद अपनी ओर के वृक्क में धंस जाती हैं। वृक्क में ये विडर नाल में खुलती हैं, जो अंत में मूत्रवाहिनी में खुलती है। अब मूत्रवाहिनी मूत्र-जनन वाहिनी कहलाती है, जो वृक्क से बाहर आकर अवस्कर में खुलती है। अवस्कर एक छोटा मध्यकक्ष होता है, जो कि उत्सर्जी पदार्थ, मूत्र तथा शुक्राणुओं को बाहर भेजने का कार्य करता है।

मादा में वृक्क के पास एक जोड़ी अंडाशय उपस्थित होते हैं (चित्र 7.22) लेकिन इनका वृक्क से कोई क्रियात्मक संबंध नहीं होता है। एक जोड़ी अंडवाहिनियाँ अवस्कर में अलग-अलग खुलती हैं। एक परिपक्व मादा एक बार में 2,500 से 3,000 अंडे दे सकती है। इनमें बाह्य निषेचन पानी में होता है। भ्रूण परिवर्धन लार्वा के माध्यम से होता है, लार्वा टैडपोल कहलाता है।

मेंढक मनुष्य के लिए लाभदायक प्राणी है। यह कीटों को खाता है और इस तरह फसलों की रक्षा करता है। मेंढक वातावरण संतुलन बनाए रखते हैं; क्योंकि यह पारिस्थितिकी तंत्र की एक महत्वपूर्ण भोजन शृंखला की एक कड़ी है। कुछ देशों में मांसल पाद मनुष्यों द्वारा भोजन के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं।

सारांश

कोशिका ऊतक, अंग और अंग तंत्र कार्य को इस प्रकार विभक्त कर लेते हैं कि शरीर का बना रहना सुनिश्चित रहे और इस तरह वे श्रम विभाजन प्रदर्शित करते हैं। कोशिकाओं का ऐसा समूह जो अंतराकोशीय पदार्थों से बना होता है तथा एक या अधिक कार्य करता है, ऊतक कहलाता है। उपकला शरीर के चादर जैसे ऊतक होते हैं बाह्य सतह और गुहिकाओं, वाहिनियों और नलिकाओं का आस्तर है। उपकलाओं की एक मुक्त सतह होती है जिसके एक तरफ शरीर तरह तथा दूसरी तरफ बाह्य वातावरण होता है। इनकी कोशिकाएं संरचनात्मक एवं क्रियात्मक रूप से संधियों से जुड़ी रहती हैं।

विभिन्न प्रकार के संयोजी ऊतक एक साथ मिलकर शरीर के अन्य ऊतकों को आलंब, शक्ति, सुरक्षा और रोधन (insulation) प्रदान करते हैं। कोमल संयोजी ऊतक आधारीय पदार्थ में प्रोटीन रेशों तथा कई तरह की कोशिकाओं से मिलकर बना होता है। उपास्थि, अस्थि, रक्त तथा वसामय ऊतक एक विशेष प्रकार के संयोजी ऊतक होते हैं। उपास्थि एवं अस्थि दोनों एक तरह के संरचनात्मक पदार्थ होते हैं। रुधिर एक तरल ऊतक है जिसका कार्य परिवहन है। वसामय ऊतक ऊर्जा को संचित करने का काम करता है। पेशीय ऊतक जो किसी उद्दीपन पर अनुक्रिया के फलस्वरूप संकुचित (छोटा) होता है और शरीर व शरीर के भाग को गतिशील बनाता है। कंकाल पेशी, वह पेशी ऊतक है, जो अस्थियों से जुड़ी रहती है। चिकनी पेशी आंतरिक अंगों का एक घटक है। हृदय पेशी, हृदय की संकुचनशील भित्तियों का निर्माण करती है। संयोजी ऊतक में सभी तीनों तरह के ऊतक होते हैं। तंत्रीय तंत्र शरीर की सभी क्रियाओं की अनुक्रिया पर नियंत्रण रखता है। तंत्रिका ऊतक की एक इकाई न्युरॉन अथवा तंत्रि कोशिका है।

केंचुआ, कॉकरोच व मेंढक एक विशेष प्रकार की शरीर संरचना को प्रदर्शित करते हैं। *फेरेटिमा पोस्थुमा* (केंचुआ) का शरीर उपचर्म से ढका रहता है। शरीर के सभी खंड 14, 15, व 16 को छोड़कर एक जैसे होते हैं। 14, 15, व 16 खंड मोटे, गहरे, ग्रंथिल होते है व क्लाइटेलम (पर्याणिका) का निर्माण करते हैं। शरीर के प्रत्येक खंड में एक एस (S) आकार का काइटिन युक्त शूक का वलय होता है। यह चलन में सहायता करता है। अधरीय भाग के 5 और 6, 6 और 7, 7 और 8 तथा 8 और 9 खंडों के बीच स्थित खांचों में शुक्रवाहिका द्वार होते हैं। मादा जनन छिद्र 14 वें खंड तथा नर जनन छिद्र 18वें खंड में होता है। आहारनाल एक पतली नलिका होती है जो मुख, मुख गुहा, ग्रसिका, पेषणी, आमाशय, आंत्र और गुदा तक होती हैं। रुधिर परिसंचरण तंत्र बंद प्रकार का होता है जो हृदय तथा कपाट (वाल्व) का बना होता है। तंत्रिका तंत्र अधर तंत्रिका रज्जु का प्रतिनिधित्व करता है। केंचुआ द्विलिंगी प्राणी है। इसमें दो जोड़े वृषण क्रमशः 10वें व 11वें खंड में पाए जाते हैं। एक जोड़ा अंडाशय 12वें - 13वें अंर्तखंड के बीच स्थित होते हैं। यह एक पुंपूर्वी प्राणी है, जिसमें निषेचन पाया जाता है। निषेचन और परिवर्धन पर्याणिका की ग्रंथियों द्वारा स्रावित कोकून के अंदर होता है।

कॉकरोच *(पेरिप्लैनेटो अमेरिकाना)* का शरीर कायाटिन निर्मित, बाह्य कंकाल से ढका रहता है। यह सिर, वक्ष और उदर में विभाजित रहता है। खंडों पर संधियुक्त उपांग पाए जाते हैं। वक्ष के तीन खंड होते हैं, जिसमें दो जोड़ी चलन पाद पाए जाते हैं। दो जोड़े पंख पाए जाते हैं, जो क्रमशः दूसरे व तीसरे खंड में होते है। उदर में 10 खंड होते हैं। आहार नाल सुपरिवर्धित होता है जिसमें मुखांगों से घिरा मुख ग्रसनी, ग्रसिका, अन्नपुट (क्रॉप), पेषणी, मध्यांत्र, पश्चांत्र और गुदा शामिल है। अग्रांत्र एवं मध्यांत्र के संधि स्थल पर यकृतीय अधनाल उपस्थित होते है। मध्यांत्र एवं पश्चांत्र के मध्य मैलपीगी नलिकाएं उपस्थित होती है और उत्सर्जन में सहायता करती है। अन्नपुट (क्राप) के निकट एक जोड़ी लार ग्रंथियाँ उपस्थित होती हैं। रुधिर परिसंचरण तंत्र खुले प्रकार का होता है। श्वसन, श्वास नलिकाओं के जाल द्वारा होता है। श्वासनलिकाएं (श्वासरंध्र) द्वारा बाहर की ओर खुलती हैं। तंत्रिका तंत्र अधर तंत्रिका रज्जु और खंडीय गुच्छिकाओं द्वारा निरूपित किया जाता है। निषेचन आंतरिक होता है। मादा 9-10 अंडकवच उत्पन्न करती है, जिसमें परिवर्धित भ्रूण पाया जाता है। एक अंडकवच के फटने से 16 नवजात शिशु बाहर आते हैं, जिन्हें अर्भक (निम्फ) कहते हैं।

भारतीय बुलफ्राग, *राना टिग्रीना* भारत में पाया जाने वाला सामान्य मेंढक है। इसका शरीर त्वचा से ढका रहता है। त्वचा पर श्लेष्म ग्रंथियाँ पाई जाती है जो अत्यधिक संवहनी होती है तथा श्वसन (जल तथा थल) में सहायता करती है। शरीर, सिर और धड़ में विभक्त रहता है। एक पेशीय जिह्वा उपस्थित रहती है जो किनारे से कटी हुई ओर द्विपालित (वाईलोब्ड) होती है। यह शिकार को पकड़ने में मदद करती है। आहारनाल, ग्रसिका, आमाशय, आंत्र और मलाशय की बनी होती है, जो अवस्कर द्वारा बाहर की ओर खुलती है। मुख्य पाचन ग्रंथियाँ, यकृत और अग्नाशय हैं। यह पानी में त्वचा द्वारा तथा जमीन पर फेफड़ों द्वारा श्वसन करता है। रुधिर परिसंचरण तंत्र बंद और एकल प्रकार का होता है। लाल रुधिर कणिकाएं केंद्रक युक्त होती हैं तंत्रिका तंत्र, केंद्रीय, परिधीय और स्वायत्त प्रकार का होता है। जनन तंत्र के मूल अंग वृक्क एवं मूत्र जनन नलिकाएं हैं, जो अवस्कर में खुलती है। नर जननांग एक जोड़ी वृषण तथा मादा जननांग एक जोड़ी अंडाशय होते है। एक मादा एक बार में 2500 से 3000 अंडे देती है। निषेचन और परिवर्धन बाह्य होता है। अंडों से टेडपोल निकलता है, जो मेंढक में कायांतरित हो जाता है।

अभ्यास

1. एक शब्द या एक पंक्ति में उत्तर दीजिए:
   (i) *पेरिप्लेनेटा अमेरिकाना* का सामान्य नाम लिखिए।
   (ii) केंचुए में कितनी शुक्राणुधानियां पाई जाती हैं?
   (iii) तिलचट्टे में अंडाशय की स्थिति क्या है?
   (iv) तिलचट्टे के उदर में कितने खंड होते हैं?
   (v) मैलपीगी नलिकाएं कहाँ पाई जाती हैं?
2. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।
   (i) वृक्कक का क्या कार्य है?
   (ii) अपनी स्थिति के अनुसार केंचुए में कितने प्रकार के वृक्कक पाए जाते हैं?
3. केंचुए के जननांगों का नामांकित चित्र बनाइए।
4. तिलचट्टे की आहारनाल का नामांकित चित्र बताइए।
5. निम्न में विभेद करें:
   (अ) पुरोमुख एवं परितुंड (ब) पटीय (septal) वृक्कक और ग्रसनीय वृक्कक
6. रुधिर के कणीय अवयव क्या है?
7. निम्न क्या हैं तथा प्राणियों के शरीर में कहाँ मिलते हैं?
   (अ) अपास्थि-अणु (कोंड्रोसाइट) (ब) तंत्रिकाक्ष ऐक्सॉन (स) पक्ष्माभ उपकला
8. रेखांकित चित्र की सहायता से विभिन्न उपकला ऊतकों का वर्णन कीजिए।
9. निम्न में विभेद कीजिए।
   (अ) सरल उपकला तथा संयुक्त उपकला ऊतक (ब) हृदय पेशी तथा रेखित पेशी
   (स) सघन नियमित एवं सघन अनियमित संयोजी ऊतक (द) वसामय तथा रुधिर ऊतक
   (व) सामान्य तथा संयुक्त ग्रंथि
10. निम्न शृंखलाओं में सुमेलित न होने वाले अंशों को इंगित कीजिए:
    (अ) एरिओल ऊतक; रुधिर, तंत्रिकोशिका न्यूरॉन, कंडरा (टेंडन)
    (ब) लाल रुधिर कणिकाएं, सफेद रुधिर कणिकाएं, प्लेटलेस्ट, उपास्थि
    (स) बाह्यस्रावी, अंतस्रावी, लारग्रंथि, स्नायु (लिगामेंट)
    (द) मैक्सिला, मैंडिबल, लेब्रय,शृंगिका (एंटिना)
    (व) प्रोटोनेमा, मध्यवक्ष, पश्चवक्ष तथा कक्षांग (कॉक्स)
11. स्तंभ-I और स्तंभ-II को सुमेलित कीजिए:

स्तंभ-I	**स्तंभ-II**
(क) संयुक्त उपकला	(i) आहारनाल
(ख) संयुक्त नेत्र	(ii) तिलचट्टे
(ग) पट्टीय वृक्कक	(iii) त्वचा
(घ) खुला परिसंचरण तंत्र	(iv) किर्मीर दृष्टि
(ड.) आंत्रवलन	(v) केंचुआ
(च) अस्थि अणु	(vi) शिश्न खंड
(छ) जननेन्द्रिय	(vii) अस्थि

12. केंचुए के परिसंचरण तंत्र का संक्षेप में वर्णन करें।
13. मेंढक के पाचन तंत्र का नामांकित चित्र बनाइए।
14. निम्न के कार्य बताइए:
    (अ) मेंढक की मूत्रवाहिनी (ब) मैलपिगी नलिका (स) केंचुए की देहभित्ति